चौधरी चरण सिंह: व्यक्तित्व और आर्थिक नीति पर एक दृष्टि

न दायें न बायें

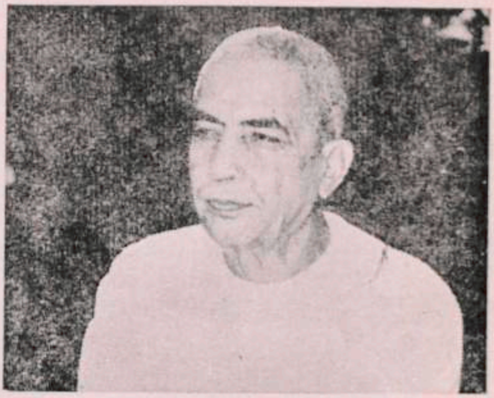

न दायें न बायें

रामभद्र उपाध्याय

प्रकाशन वर्ष : १९७८

मूल्य : ३० रुपये

सर्वाधिकार प्रकाशक के अधीन

NA DAYEN NA BAYEN

लोकसत्ता प्रकाशन, ९५, भदैनी; वाराणसी के लिए श्री अजय कुमार उपाध्याय
द्वारा एजुकेशनल प्रिंटर्स, गोला दीनानाथ; वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित

न दायें न बायें

रामभद्र उपाध्याय	न दायें न बायें	१
राजनारायण		१०
श्यामा प्रसाद प्रदीप	चौधरी चरण सिंह	१७
डा० हरिहर नाथ त्रिपाठी		२९
रामनरेश यादव	दृढ़ता और ईमानदारी के प्रतीक	३६
कार्तिकेय		४२
सत्यपाल मलिक	नेहरू का बुत और चरण सिंह	४६
दमयन्ती पांडेय		५५
मंजुला उपाध्याय	माताजी : उनके व्यक्तित्व का अंग	६०
शान्ता कुमार		६६
मोहन एस० ओबेराय	···मेरी दृष्टि में	७०
शिवदेव नारायण राय		७४
राजेन्द्र पुरी	चौधरी चरण सिंह का महत्व	८३

और·······

....

चौधरी चरण सिंह की नव प्रकाशित पुस्तक

इंडियाज इकॉनौमिक पौलिसी

द गांधियन ब्लू प्रिंट

का

पक्ष-प्रतिपक्ष और उत्तरपक्ष

धर्मशील चतुर्वेदी

पृ० ९९-११२

आभार

मैं प्रो० आर० के० अमीन, संसद सदस्य, श्री पीलू मोदी, श्री दूधनाथ चतुर्वेदी व प्रो० कृष्णनाथ, अर्थशास्त्र विभाग, काशी विद्यापीठ के साथ ही उन अनेक पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तक लेखकों का आभारी हूँ जिन्होंने इस समीक्षात्मक निबन्ध की रचना में सुझाव दिये या जिनकी सामग्री का उपयोग किया गया।

—धर्मशील चतुर्वेदी

प्रस्तुति

विगत लोकसभा निर्वाचन के बाद समस्त देश में जनता सरकार के प्रथम प्रधान मंत्री के रूप में जिन दो-तीन नामों की जोरदार चर्चा थी उनमें चौधरी चरण सिंह का भी एक नाम था। केन्द्रीय सरकार में काफी दिनों तक रहने तथा वय में वरिष्ठ होने के कारण श्री मोरारजी देसाई को यह पद दिया गया और चौधरी साहब ने इस निर्णय के पक्ष में अपना मत देकर जनभावना का समादर किया। उनके साथ सर्वोच्च पद पाने के लिये कुछ भी करने का जो आरोप जोड़ा जाता रहा है उसका भी इस तरह परिहार हो गया।

चौधरी साहब जैसे बेजोड़ व्यक्ति के बारे में जितना कुछ लिखा जाना चाहिए था और जितनी चर्चा होनी चाहिए थी उतनी नहीं हुई। जहाँ तक मेरी दृष्टि जाती है चौधरी साहब के बहुरंगी और वैविध्यपूर्ण व्यक्तित्व पर आज तक कोई विशिष्ट और अच्छी पुस्तक नजर नहीं आई है। यत्र-तत्र पत्र-पत्रिकाओं में इधर अवश्य ही उन पर इतनी सामग्री आई है जितनी किसी अन्य के सम्बन्ध में नहीं।

इसके तीन कारण हैं एक तो स्व० नेहरू और श्रीमती इन्दिरा गांधी के विरुद्ध उनका एकदम एकतरफा रुख, दूसरे उनकी भारतीय अर्थनीति सम्बन्धी व्याख्या और तीसरे जनता पार्टी की घटकवादी छीना-झपटी जिसमें पार्टी को जोड़ने और तोड़ने की चर्चाएँ रहीं। पार्टी-तोड़कों में जिन तीन-चार लोगों की चर्चा रही है उनमें दुर्भाग्य से अनायास ही चौधरी साहब का नाम घसीटा जाता रहा है। जबकि वास्तविकता यह है कि जितने निस्पृह और शान्त भाव से वे देश की सबसे ज्वलन्त और असाध्य समस्या—शान्ति-व्यवस्था को सम्हाल रहे हैं वैसे कम ही लोग हैं। असलियत तो यह है कि जनता पार्टी के नेता लोग जितना जनता

पार्टी को नहीं तोड़ रहे हैं उससे कई गुना अधिक निहित स्वार्थी वर्गों द्वारा संचालित समाचारपत्र समूह। इसके लिये वे स्वतंत्र हैं।

यद्यपि तीस वर्ष पूर्व बापू की रहनुमाई में ही देश आजाद हुआ किन्तु तत्कालीन शासनस्थ लोगों ने गांधी और उनके दर्शन की उपेक्षा कर दी। विगत वर्ष जब देश ने दमनकारी तानाशाही शासन से मुक्ति प्राप्त कर दूसरी आजादी हासिल की तब से गांधी और गांव की बात पुनः प्रतिस्थापित हुई है। इस गांवप्रधान देश की आवश्यकता के अनुसार नीतिनिवेशन का सर्वाधिक श्रेय मैं चौधरी साहब को देता हूँ। जब नेहरू जी देश और कांग्रेस के नेता थे, हमने गांव और कृषि के मुद्दे पर चौधरी साहब को प्रायः ही नेहरू से टकराते देखा है। अपने विचारों और सिद्धान्तों के मामलों में उन्होंने नेहरू जी से भी समझौता नहीं किया और आज जब अवसर आया उन्होंने टिकाऊ अर्थव्यवस्था के अपने स्वप्नों को साकार रूप देना शुरू कर दिया है। जनता सरकार के कार्यकाल के एक वर्ष पूरे हुए। इस अवधि में धर्म निरपेक्ष, समन्वित-सामासिक तथा एकताबद्ध भारत के निर्माण के लिए अल्पसंख्यकों, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों तथा पिछड़े वर्गों को राष्ट्रीय मुख्य धारा में लाने के उद्देश्य से तीन स्वतंत्र एवं स्थायी आयोगों की स्थापना चौधरी साहब के कार्यकाल की एक बड़ी उपलब्धि है।

सार्वजनिक तथा राजनीतिक जीवन से भ्रष्टाचार समाप्त करने के उद्देश्य से विभिन्न आयोगों के माध्यम से जहां पिछली सरकार के उच्चपदस्थ लोगों के काले कारनामों का पर्दाफाश हो रहा है, वहीं भविष्य में ऐसा न होने देने के लिए एक स्थायी उच्च अधिकार प्राप्त लोकपाल की नियुक्ति का फैसला भी गृह विभाग ने किया है। जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा सत्ता के दुरुपयोग तथा भ्रष्टाचार के विरुद्ध एक यथार्थ तथा विश्वस्त सुरक्षापंक्ति कायम करने को चौधरी साहब कृतसंकल्प हैं। भारतरत्न और पद्मश्री आदि अलङ्करणों की सामन्ती

परम्परा की समाप्ति, मीसा की समाप्ति तथा निरोधक नजरबन्दी विधेयक की वापसी, पुलिस आयोग का गठन, देश भर में आम-चुनाव, आपात स्थिति के दौरान मृतकों के आश्रितों को पेंशन, नागरिक अधिकार आयोग की नियुक्ति का निर्णय आदि ऐसे कार्य हैं जिनसे गृहमंत्री की ओर सबका लगाव बढ़ना स्वाभाविक है। उनके इसी कर्तृत्व और व्यक्तित्व से प्रभावित होकर मैंने नयी आजादी के एक वर्ष पूरा होने पर चौधरी साहब के सम्बन्ध में प्रस्तुत पुस्तक प्रकाशित करने का निश्चय किया।

इस पुस्तक में चौधरी चरण सिंह के व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों पर देश के सुप्रसिद्ध और विशिष्ट लेखकों द्वारा प्रकाश डाला गया है। कुछ ऐसे भी रचनाकार हैं जिनका चौधरी साहब से घनिष्ठ सहयोग भी रहा है। उनके साथ कार्य करनेवाले कुछ राजनीतिक सहयोगियों के लेख भी हैं। लेकिन इन सभी रचनाकारों ने केवल उनका प्रशस्तिगान ही नहीं किया है बल्कि यथा अवसर उनकी कमजोरियों पर भी खुलकर हमला किया है।

विलयन के समय उत्तर प्रदेश स्वतंत्र पार्टी के उपाध्यक्ष तथा सुप्रसिद्ध रचनाकार, मुक्त पत्रकार और फौजदारी कानून के विशिष्ट अधिवक्ता श्री धर्मशील चतुर्वेदी द्वारा चौधरी चरण सिंह की नयी पुस्तक के सम्बन्ध में लिखित अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण निबन्ध भी सौभाग्य से इस पुस्तक के लिए प्राप्त हो गया। मैं समझता हूँ कि इस लेख के कारण चौधरी साहब के रचनात्मक पक्ष पर पुस्तक में जो कमी रह गयी थी वह पूरी हो गयी है।

इस पुस्तक के लिये लेख लिखने वाले सभी सम्मानित और विशिष्ट रचनाकारों का मैं अत्यन्त आभारी हूँ। हम जिस आकार में इस पुस्तक का प्रकाशन करना चाहते थे नहीं कर पाये इसलिये कि हमारे साधन सीमित हैं और हमने इस क्षेत्र में प्रथम ही प्रयास किया है। मैं जनवार्ता

हिन्दी दैनिक के सम्पादक श्री ईश्वर देव मिश्र, श्री शिवदेव नारायण राय तथा अन्य पत्रकारों का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने पुस्तक को सर्वांग सुन्दर बनाने में मुझे निरन्तर सहयोग प्रदान किया।

अत्यधिक सावधानी के बावजूद यदि कहीं कोई त्रुटि रह गई हो तो इसके लिये मैं पाठकों से क्षमा चाहता हूँ।

रंगभरी एकादशी
१९७८

रामभद्र उपाध्याय
सम्पादक

रामभद्र उपाध्याय

न दायें, न बायें

कथाकार संवेदनशील होता है, उसकी पैनी नजर आदमी के चेहरे पर फिसलकर और परिधान में लिपटकर ही नहीं रह जाती बल्कि उसकी धड़कनों को टटोल आती है। आज की आधुनिकतम शल्य चिकित्सा भी मानव मस्तिष्क की जिस गहराई को नहीं छू पाई है उसके तन्तुओं को भी कुरेद आती है। कोई भी अबूझ इन्सान उसकी समझ से परे नहीं है।

हिन्दी कथा साहित्य की पीढ़ियों की छोर पर अवस्थित दो ऐसे ही संवेदनशील, तीखी और मर्मभेदी नजर वाले कथाकारों के सामने से गुजरे हैं चौधरी चरण सिंह, भारत के वर्त्तमान गृह मंत्री।

"गजब की प्राण-शक्ति मिली है उस आदमी को। जैसे अपने अहं पर तथा अपनी योग्यता पर उसे असीम और अटूट विश्वास हो।" "मैंने हमेशा यह अनुभव किया कि मेरी ही भाँति उनमें भी अहं का एक पागलपन है, और सच बात तो यह है कि अहं का यह पागलपन मुझे बड़ा प्यारा लगता है।" श्री भगवतीचरण वर्मा (साप्ताहिक हिन्दुस्तान ६ से १२ नवम्बर ७७) की एक्सरे रिपोर्ट है यह चौधरी साहब के बारे में।

आधुनिक कथाकार श्री राजेन्द्र अवस्थी ने भी चौधरी साहब के व्यक्तित्व और दिमाग की तराश की है और पाया है—"चौधरी साहब

संयत, शान्त, धीर-गंभीर व्यक्तित्व के धनी, कुशल राजनीतिज्ञ हैं। प्रत्येक प्रश्न का सीधा सहज और बेलाग उत्तर देते हैं—दिमाग में कहीं कंफ्यूजन नहीं है।" "चौधरी चरणसिंह के जिस गुण ने हमें आकर्षित किया है, वह है उनकी स्पष्टवादिता और बेलाग बातें।" (कादम्बिनी अगस्त ७७)

सच पूछें तो कुछ और धारदार और गहराई के साथ पैठने वाली नजरें पत्रकार की होती हैं। जो डूबती हैं तो उजाले से अधिक अन्धेरे की ओर। इन्सान के दिमाग के उसी अन्धेरे हिस्से में वह सब कुछ होता है जो इन्सान बाहर से कत्तई नहीं होता। उस अन्धेरे को वह कठोर आवरण में बन्दी रखने का प्रयास करता है। मगर कम ही लोग

काशी के कुलीन और विद्यासम्पन्न परिवार में जन्मे श्री रामभद्र उपाध्याय अर्से से प्रदेश की राजनीति के केन्द्रबिन्दु बने रहने वाले अनेक राजनीतिज्ञों के निकट सम्पर्क में रहे हैं। चौधरी चरण सिंह के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों पर इस लेख में उन्होंने नितान्त मौलिक और सर्वथा नई बातें प्रस्तुत की हैं। अपने विचारों को अधिक स्पष्ट करने के लिए उन्होंने जो प्रमाण दिये हैं वे मान्य और स्थापित जनों के हैं। इस दृष्टि से यह लेख कई माने में महत्वपूर्ण दस्तावेज माना जायगा।

ऐसा कर पाते हैं। ऐसे जटिल अन्धेरे को कोई साधारण आदमी चीर नहीं पाता और न उसमें पैठ पाता है।

देश के शीर्षस्थ अंग्रेजी दैनिक पत्रों के शीर्ष पदों पर रहने वाले सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री डी० आर० माणकेकर की खोज भी बहुमूल्य है। "मिंची हुई आँखों और निद्रित स्वर के पीछे छिपा है एक स्पष्ट दिमाग, एक दृढ़ इच्छा और एक अपराजेय आत्मा।" "मैं अपनी स्मृतियों को कुरेदता हूँ, अगस्त १९४७ की बात है, एक बहुमूल्य अवसर पर राजाजी मुझसे सरदार पटेल के संबन्ध में बताते हुए कहने लगे वे मूलतः शर्मीले व्यक्ति हैं जो अपने शर्मीलेपन को कठोरता के सुदृढ़ आवरण से छिपाये

हैं और एक जिन्दादिल आदमी हैं। वे ऊपर से जो कुछ हैं भीतर से वैसे नहीं हैं। लेकिन ऐसा नहीं है कि उनके बाहर भीतर कोई फर्क हो।

वे गर्मियों में खादी की धोती, कुर्त्ता और टोपी धारण करने वाले किसान हैं, जाड़ों में गहरे रंग का कोट पहनकर अभिजात हैं। किसानों की तरह चारपाई पर बैठना पसन्द करते हैं, फ़ुर्सत के समय ताश के साथ बस कोटपीस खेल लेते हैं।

गौर वर्ण और तीखे नाकनक्श के कारण, अक्सर चेहरे को ऊँग-

चरित्र की विशेषताएँ हैं। सामाजिक शोषण और उत्पीड़न के वे कट्टर विरोधी हैं। उनकी आर्थिक नीतियों और मान्यताओं का मूल-किसानों, कमज़ोर वर्गों और पिछड़े वर्गों तथा अनुसूचित जातियों का कल्याण व उनकी आर्थिक दशाओं को ऊँचा उठाना है, जिससे समूचे तौर पर राष्ट्र प्रगति की सही दिशा प्राप्त कर सके। अतः वह कृषि-मूलक आर्थिक नीतियों के समर्थक हैं किन्तु औद्योगिक एवं सर्वतोमुखी विकास में भी उनका उतना ही विश्वास है।

देवी लाल

मुख्यमंत्री—हरियाणा

लियों पर ठहराने के कारण और हाथों को कहाँ ठहरायें इसके प्रति सदा चेतन रहने के कारण वे अभिजात हैं, और वैसे गाँव के सरल किसान। मगर कहीं कोई ऐसी सीधी रेखा नहीं खींची जा सकती कि वे कितने और कहाँ तक किसान हैं, और कितने और कहाँ तक अभिजात।

२३ दिसम्बर १९०२ को मेरठ के नूरपुर गाँव में वे जन्मे। आगरा विश्वविद्यालय में शिक्षा ली और ९ बरसों तक वकालत की। इस तरह वे भी देश के उन महान राजनेताओं की कड़ी में हैं जिन्हें बार से देश-

सेवा में जाने का गौरव मिला। महात्मा गांधी, महामना मालवीय से चली आती एक गौरवपूर्ण परम्परा।

नेहरू, पटेल तथा अन्य नेताओं की तरह उन्होंने भी स्थानीय निकायों से राजनीति की शुरुआत की। वे लोग पालिकाओं में गये इस लिये कि शहरी थे और चौधरी साहब जिला बोर्ड में गये इसलिये कि उन्होंने अपनी जिन्दगी गाँव से शुरू की थी और किसानों के प्रति उनके दिल में दर्द था। फिर उत्तर प्रदेश शासन में संसदीय सचिव से भारत के गृहमन्त्री तक पहुँचने में जाने कितनी यात्रायें और जाने कितने पड़ाव और ठहराव आये हैं उनकी लम्बी, कठिन और दुरूह यात्रा में। दुर्गम पहाड़ी यात्रा, चक्करदार घेरे लेकिन भटकाव नहीं, हमेशा मंजिल के इर्दगिर्द। न वे भटके, न अटके और न फिसलकर कभी नीचे ही गिरे।

चरण सिंह स्वयं को किसान कहा जाना पसन्द करते हैं और बेझिझक जाट कहलाना भी पसन्द करते हैं इसलिये कि अनेक बौद्धिक संकीर्णताओं के बावजूद जाटों ने सीमा पर प्रहरी के रूप में अपने शौर्य की छाप छोड़ी है तो उत्तर प्रदेश के पश्चिमी अंचल को अनाज का भण्डार बनाने के लिये भी कोई कोर कसर नहीं उठा रक्खी। वे जय जवान और जय किसान साथ साथ हैं।

इसीलिये वे यह भी समझते हैं कि देश की तरक्की और खुशहाली का सुरक्षित मार्ग क्या है और इसके मार्ग में आने वाली रुकावटें क्या हैं। सम्भवत: यही कारण है कि चौधरी साहब मार्क्सवाद विरोधी, कम्युनिस्ट विरोधी, समाजवाद विरोधी और पूँजीपतियों तथा इजारेदारों के विरोधी हैं। इस दृष्टि से वे पटेल से अधिक राजाजी के करीब हैं। गोकि कम ही लोग राजाजी को पूंजीपतियों का विरोधी मानते हैं।

सहकारी खेती के कांग्रेस के प्रस्ताव का चौधरी साहब ने विरोध ही किया था मगर राजाजी ने उसके विरोध में १९५९ में स्वतन्त्र पार्टी का ही गठन कर दिया और बड़ी संख्या में ऐसे लोग कांग्रेस से बाहर

आ गये जो राजाजी या चौधरी चरण सिंह के विचारों को सही समझते थे।

जिस समय स्वर्गीय नेहरू अपनी प्रखर आभा से विरोधियों को ही नहीं अपने दल के सहयोगियों को भी चकाचौंध में डाले हुए थे उस समय सहकारी खेती के प्रश्न पर चौधरी चरण सिंह ने कांग्रेस के भीतर रह कर ही वह विरोध का स्वर उठाया कि नेहरू को विकम्पित हो जाना पड़ा और इतिहास इसका सबूत है कि इस कशमकश में चौधरी की बात ही अन्ततः साबित हुई।

आर्थिक विश्वासों के मामले में चौधरी साहब जहाँ समाजवाद विरोधी होने के कारण दक्षिणपन्थी कहला सकते हैं वहीं पश्चिमी पूँजी-वादी व्यवस्था के प्रखर आलोचक होने के कारण मध्य से थोड़ा वाम हटकर वामपन्थी। मगर ये दोनों ही विशेषण वे नकारते हैं। वे न दायें हैं न बायें। इस नाते उन्हें कोई मध्यममार्गी समझ सकता है मगर वे मध्यममार्गी कहलाना पसन्द नहीं करते इसलिये कि वे स्वयं को 'गांधी द्वारा प्रस्थापित समाजवाद' का हिमायती मानते हैं।

इसे मध्यम मार्ग न कहकर भारत के सन्दर्भ में केन्द्रीय या मुख्य मार्ग कहा जाना चाहिए। शायद उनकी स्थापना भी यही है और जनता पार्टी की आर्थिक नीति की जो रूपरेखा उन्होंने बनाई है वह इसी नीति की परिचायक है।

सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार उन्हें पसन्द नहीं। इस मामले में वे सिर्फ भाषण तक ही सीमित नहीं। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि आधी शती तक राजनीति में रहने के बावजूद उन पर कोई उंगली नहीं उठा सका। सार्वजनिक धन के दुरुपयोग, भाई-भतीजावाद और अपव्यय का अभियोग विरोधी दल के लोग भी नहीं लगा सके। यह भी है कि उन्होंने किसी भ्रष्ट व्यक्ति को अपने पास फटकने न दिया।

यही कारण है कि भ्रष्ट सरकारी अधिकारी उनका नाम सुनकर काँपते हैं, भ्रष्ट पूँजीपति उन्हें आँख की किरकिरी समझते हैं और भ्रष्ट राजनीतिज्ञ उनके इर्दगिर्द जुट नहीं पाते।

इसीलिये चौधरी साहब में अहं है, सत्य का तेज है और गजब का आत्मविश्वास है। उन्होंने भारतीय कृषि का गहन अध्ययन किया है और वे भी महात्मा गान्धी की तरह इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि भारतीय आर्थिक तन्त्र का मूलाधार कृषि, कुटीर और लघु तथा मध्यम उद्योग हैं इसके अलावा कुछ नहीं। इसलिये उनके दिमाग में कहीं कोई कन्फ्यूजन नहीं, कम से कम लक्ष्य के प्रति न कोई संशय और न झिझक इसलिये वे बेलाग, दो टूक बात कहते हैं। वे देश की नब्ज को पहचानते हैं। राजनीति और कूटनीति में भले ही कोई उनसे आगे हो मगर देश के आर्थिक विकास का जो नक्शा उनके दिमाग में है वह अटूट है।

इसीलिये कभी कभी लगता है कि उन्हें कृषि तथा योजना जैसे मन्त्रालयों और विभागों को सम्भालना चाहिए। लेकिन वे बराबर प्रशासन और गृह विभागों को पसन्द करते हैं। मनोवैज्ञानिक विश्लेषण यदि किया जाय तो हमें भी उसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ेगा जहाँ पत्रकार श्री माणकेकर पहुँचे हैं। चौधरी साहब शर्मीली प्रकृति के हैं और इस कमजोरी को छिपाने के लिए वे एक कठोर आवरण में रहना चाहते हैं। यह आवरण उन्हें प्रशासक के रूप में ही मिल पाता है।

चौधरी चरण सिंह आदर्श पति, जिम्मेदार पिता, भरोसे वाले मित्र, विश्वसनीय सहयोगी और मार्गदर्शक हैं। उनकी प्रशासनिक दक्षता, नीतियों को चरितार्थ करने की क्षमता और नीतिज्ञता बेजोड़ है शायद इसीलिये उनकी तुलना कभी कभी सरदार पटेल से भी की जाती है।

दिल्ली की गद्दी पर बहुत सारे किसान गये और बैठे हैं मगर वे किसान न रहकर नेता हो गये। मगर चौधरी के रूप में जो किसान दिल्ली पहुँचा है उसने दिल्ली को अपने रंग में रंग लिया। आज देश का

सरदार पटेल के साथ आज भी पूरी सचाई के साथ जुटी है। उपमाओं की होड़ में मैं जाना नहीं चाहता।

वे धरती के साथ जुटे हैं तन से और मन से। यह और बात है कि वह धरती अरुणांचल और कन्याकुमारी, पुरी और द्वारिका की नहीं बस मेरठ और महज मेरठ की धरती है जो कुरुक्षेत्र से लेकर १८५७ के के विप्लव तक लगातार खून से तरबतर होती रही है। जिस धरती ने बार बार विदेशी आक्रान्ताओं को रोका है, झेला है और भगाया है। जो धरती बार बार जाने कितनी बार आक्रान्त हुई है। जाने कितनी बार वह गुलाम हुई और जाने कितनी बार आजाद।

इसलिये उनका व्यक्तित्व कोई अलग नहीं। मेरठ के हर किसान का वैसा ही व्यक्तित्व है। उसके सोचने समझने और काम करने का वही ढङ्ग है। इस माने मे चौधरी चरण सिंह धरतीपुत्र हैं ऊपर से नीचे तक।

•

भारतीय राजनीति की वर्तमान पीढ़ी में किसानों के हितचिन्तक और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के पोषक चौ० चरण सिंह जी ने महात्मा गान्धी का कर्म तथा सरदार पटेल का तरीका पाया है। इस एक व्यक्ति में उन दो महान विभूतियों के गुणों का समन्वय होना मामूली बात नहीं है। चौधरी चरण सिंह जी पर जातिवाद या सम्प्रदायवाद का आरोप लगाने वाले यह भूल कर जाते हैं कि वे न हिन्दू हैं न मुसलमान, न सिख हैं न ईसाई, न जाट हैं न ब्राह्मण, न भर हैं न भूमिहार—वे 'जन' हैं। मैं उन्हें जन इसलिए कहता हूँ कि वे जनतंत्र के प्रबल समर्थक हैं। बिना जन बने और जाति-पाँति की सीमाओं को तोड़े कोई व्यक्ति सच्चा जनतंत्रवादी हो ही नहीं सकता।

भारतवर्ष की वर्तमान परिस्थितियों में देश का सबसे बड़ा अहित कट्टर जातिवाद और सम्प्रदायवाद कर रहा है। इसीलिए चौधरी चरण सिंह ने जातिवाद को समाप्त करने का निश्चय कर इस काम के लिए बीड़ा उठाया है। इनमें भारतीय संस्कृति कूट-कूटकर भरी हुई है। जिन

अल्पसंख्यकों का नेता वही होगा जो जनता का नेता है। जाति-पाँति की भावना से ऊपर उठा हुआ तथा 'समान प्रसवात्मिका: जाति:' के सिद्धान्त के अनुसार सभी मनुष्य को मनुष्य और बराबर मानने वाला,

पास कुछ है भी वे भी शिकमी पर दूसरों की जमीन लेकर खेती करते हैं, और उनको लगान या बँटाई के रूप में अनाज देते हैं। जमींदारी उन्मूलन के अवसर पर उत्तर प्रदेश के बड़े बड़े ताल्लुकेदारों और भूमिधरों ने शिकमी पर दी हुई जमीन को शिकमीदारों से बलात् छीनने का प्रयास किया। इससे हरिजनों और पिछड़ी जाति के लोगों में हाहाकार मच गया। उस समय चौधरी चरण सिंह ने ही विधेयक पेश कर कानून बनवाया था कि सभी शिकमीदार जिनका नाम सरकारी कागज में शिकमीदार के खाने में दर्ज है वे सभी सीरदार बना दिए जायेंगे और अपनी जमीन के मालिक हो जाएँगे। उसी कानून के तहत

भारतीय राजनीति की वर्तमान पीढ़ी में किसानों के हितचिन्तक और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के पोषक चौ० चरण सिंह जी ने महात्मा गान्धी का कर्म तथा सरदार पटेल का तरीका पाया है। इस एक व्यक्ति में उन दो महान विभूतियों के गुणों का समन्वय होना मामूली बात नहीं है। चौधरी चरण सिंह जी पर जातिवाद या सम्प्रदायवाद का आरोप लगाने वाले यह भूल कर जाते हैं कि वे न हिन्दू हैं न मुसलमान, न सिख हैं न ईसाई, न जाट हैं न ब्राह्मण, न भर हैं न भूमिहार—वे 'जन' हैं। मैं उन्हें जन इसलिए कहता हूँ कि वे जनतंत्र के प्रबल समर्थक हैं। बिना जन बने और जाति-पाँति की सीमाओं को तोड़े कोई व्यक्ति सच्चा जनतंत्रवादी हो ही नहीं सकता।

भारतवर्ष की वर्तमान परिस्थितियों में देश का सबसे बड़ा अहित कट्टर जातिवाद और सम्प्रदायवाद कर रहा है। इसीलिए चौधरी चरण सिंह ने जातिवाद को समाप्त करने का निश्चय कर इस काम के लिए बीड़ा उठाया है। इनमें भारतीय संस्कृति कूट-कूटकर भरी हुई है। जिन

अल्पसंख्यकों का नेता वही होगा जो जनता का नेता है। जाति-पाँति की भावना से ऊपर उठा हुआ तथा 'समान प्रसवात्मिका: जाति:' के सिद्धान्त के अनुसार सभी मनुष्य को मनुष्य और बराबर मानने वाला,

पास कुछ है भी वे भी शिकमी पर दूसरों की जमीन लेकर खेती करते हैं, और उनको लगान या बँटाई के रूप में अनाज देते हैं। जमींदारी उन्मूलन के अवसर पर उत्तर प्रदेश के बड़े बड़े ताल्लुकेदारों और भूमिधरों ने शिकमी पर दी हुई जमीन को शिकमीदारों से बलात् छीनने का प्रयास किया। इससे हरिजनों और पिछड़ी जाति के लोगों में हाहाकार मच गया। उस समय चौधरी चरण सिंह ने ही विधेयक पेश कर कानून बनवाया था कि सभी शिकमीदार जिनका नाम सरकारी कागज में शिकमीदार के खाने में दर्ज है वे सभी सीरदार बना दिए जायेंगे और अपनी जमीन के मालिक हो जाएँगे। उसी कानून के तहत

दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। आज हरिजनों के नाम पर घड़ियाली आँसू बहाने वाले कांग्रेस के वे कट्टरपन्थी तिलक मुद्रा वाले वशिष्ठी ब्राह्मण उन दिनों भीतर ही भीतर चौधरी चरण सिंह से इस कानून बनाने के लिए चिढ़ते भी थे, और आज के बहुत सारे इन्दिरा-भक्त लेखपालों और पटवारियों को मिलाकर सरकारी कागजों में शिकमीदार हरिजनों के नाम तक कटवा रहे थे और बहुत से लोग इस तरह के कामों में सफल भी हुए थे। सीरदारी के कानून ने हजारों-हजार हरिजनों को जमीन दिलवा दी। चौधरी चरण सिंह जी इस कानून के प्रणेता थे।

अल्पसंख्यकों का नेता वही होगा जो जनता का नेता है। जाति-पाँति की भावना से ऊपर उठा हुआ तथा 'समान प्रसवात्मिका: जाति:' के सिद्धान्त के अनुसार सभी मनुष्य को मनुष्य और बराबर मानने वाला, तथा समाज में जो जितना अधिक पिछड़ा है उसको उतना अधिक मौका देकर औरों के बराबर लाने के सिद्धान्तों का समर्थक ही इन पिछड़ी जातियों का सच्चा नेता और देश का नेता हो सकता है। चौधरी चरण सिंह इस कसौटी पर खरे उतरते हैं।

चौधरी चरण सिंह जी नेहरू की आर्थिक नीतियों के बराबर विरोधी रहे हैं। राजनीति के जानकार और विद्यार्थी जिन्होंने सूक्ष्म दृष्टि से इन नीतियों का विवेचन किया है, जानते हैं कि नेहरू जी की दृष्टि और चौधरी चरण सिंह जी की दृष्टि में शुरू से ही मौलिक अन्तर रहा है। यही कारण था कि डा० राममनोहर लोहिया ने १९६७ के चुनावों के

तुरन्त बाद उत्तर प्रदेश में संयुक्त विधायक दल के नेता के रूप में चौधरी चरण सिंह जी के नाम की स्वीकृति दी थी और वे संविद के नेता स्वीकारे गये थे। चौधरी साहब ने नेहरू जी की सहकारी खेती नीति का प्रारम्भ से ही विरोध किया था, और अन्त में यह बात सिद्ध हो गयी कि नेहरू जी गलत थे और चरण सिंह जी की नीतियाँ ही सही थीं क्योंकि सहकारी खेती न तो चल सकती थी और न चली।

नेहरू जी अमेरिका और रूस के मॉडल पर अपने देश में भी बड़े बड़े उद्योग-धन्धों को लगाकर बेकारी को बढ़ाने की नीति चलाते रहे। महात्मा गाँधी देश में चरखा, करघा, हैण्डलूम जैसे छोटे गृह और कुटीर उद्योग लगाकर देश की अर्थव्यवस्था को चलाने तथा बेरोजगारी दूर करने का भी सुझाव दिया करते थे, और जीवनपर्यन्त वे इस नीति को चलाने के लिए जोर देते रहे। उनका विचार था कि देश के करोड़ों

लोगों को काम देने के लिए छोटे उद्योग-धन्धे और कुटीर उद्योगों के सिवाय दूसरा कोई रास्ता नहीं है। चौधरी चरण सिंह जी भी महात्मा गान्धी के विचारों के अनुयायी हैं, वे इस राय के हैं कि भारी उद्योगों के जरिए इस देश की बेकारी की समस्या का समाधान नहीं हो सकता, इसलिए वे बराबर इस बात पर जोर देते रहे हैं कि जो काम हाथ से हो सकता है उसके लिए हाथों का ही इस्तेमाल होना चाहिए। मशीन का प्रयोग वहीं होना चाहिए जहाँ हाथ काम न कर पाएँ। इसलिए जनता पार्टी की कार्यसमिति के सम्मुख आर्थिक नीति का प्रस्ताव रखते हुए चौधरी साहब ने भूमि सेना, सिंचाई सेना और शिक्षक दल तैयार करने की बात कही थी। इन योजनाओं से देश की पैदावार भी बढ़ेगी, अन्न के मामले में आत्मनिर्भरता भी बढ़ेगी और कुछ माने में बेकारी भी दूर होगी।

सिंचाई सेना के द्वारा भी बेकारी पर काबू पाया जा सकता है। साथ-साथ ही समय पर किसानों को पानी देकर पैदावार भी बढ़ाई जा सकती है। शिक्षक दल निरक्षरों को शिक्षित करने तथा उनको ज्ञान प्राप्त करने का साधन देगा, लाखों लोगों को रोजी-रोटी भी। भूमि सेना जमीन को तोड़कर और काफी भूमि खेती के लायक बना सकती है।

समाजवाद को फैशन मानने वाले कुछ लोग कहते हैं कि चौधरी चरण सिंह जी समाजवाद के विरोधी हैं। मेरी राय में वे लोग बुद्धि-विभ्रम से ग्रसित हैं। ये पढ़ेलिखे शहरी लोग समाजवाद शब्द को रटते हैं, मगर समाजवादी आचरण और व्यवहार को बराबर तिलाञ्जलि देते रहते हैं। हमारे लिए समाजवाद और लोकतन्त्र दोनों शब्द पर्याय-वाची हैं। लोकतन्त्र में लोकभाषा, लोकभोजन, लोकभूषा और लोक-भवन आवश्यक हैं। चौधरी चरण सिंह जी को मैंने काफी नजदीक से देखा है। वे लोकभाषा, लोकभोजन, लोकभूषा और लोकभवन को

व्यावहारिक तरीके से अपनाते हैं। वे इसी शैली के जीवनदर्शन को पसन्द करते हैं। अतः वे सच्चे समाजवादी और लोकतन्त्रवादी हैं। कानूनी समानता, आध्यात्मिक समानता, आर्थिक और सामाजिक समानता को जनता को अच्छी तरह से समझाया जाना चाहिए। चौधरी चरण सिंह जी इन समानताओं के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं।

भाषा के प्रश्न पर भी उनका दृष्टिकोण काफी स्पष्ट है। शिक्षा का माध्यम राष्ट्रीय भाषाएँ ही हों, इसको भी चौधरी साहब ने मजबूती से उठाया है। चिकित्सा पद्धति सस्ती हो तथा गाँव-गाँव तक पहुँचे, इसके लिए भी वे लगातार प्रयास करते रहते हैं। क़िसानों की समस्याओं से वे भलीभाँति परिचित ही नहीं अपितु उसमें रमे हुए हैं।

डा० लोहिया के इस नारे—

'पेट है खाली मारे भूख। बन्द करो दामों की लूट॥

को चौधरी चरण सिंह जी ने व्यवहार में लाने का फैसला किया है। वे काफी दिनों से ऐसा चाहते हैं। उनका कहना है कि किसानों द्वारा पैदा की गयी उपज और कारखानों में बनी वस्तुओं के दामों में जबतक न्याययुक्त सन्तुलन नहीं स्थापित होगा तबतक इस देश का बहुसंख्यक किसान शोषित होता ही रहेगा। इस शोषण को समाप्त करने के लिये धरतीपुत्र के रूप में हिन्दुस्तान के किसानपूजक चौधरी चरण सिंह जी का आकर्षक व्यक्तित्व और उनकी प्रशासनिक क्षमता का व्यक्ति देश के नेतृत्व में पहली बार आया है।

•

श्यामाप्रसाद प्रदीप

चौधरी चरण सिंह

देश के एक बेजोड़ राजनीतिज्ञ

भारत के जीवित नेताओं में लोकनायक जयप्रकाश नारायण और चौधरी चरण सिंह को मैं पितातुल्य मानता हूँ और 'बाबूजी' ही कहता भी हूँ। दोनों नेताओं से पहली मुलाकात में मुझ पर जो प्रभाव पड़ा और उनमें जो साफगोई और निश्छलता देखने को मिली, उससे उनके प्रति मेरी श्रद्धा उत्तरोत्तर बढ़ती ही गयी। जयप्रकाश जी द्रष्टा हैं और चौधरी चरण सिंह यथार्थवादी एवं कठोर प्रशासक। गाँधीवादी होते हुए भी दोनों में वही अन्तर है जो महर्षि वशिष्ठ और ब्रह्मर्षि विश्वामित्र में। जे० पी० ने बुद्ध के आर्य धर्म की तरह सम्पूर्ण क्रान्ति की मोटी रूप-रेखा मात्र दी है। उसका दर्शन तो कोई सारिपुत्त मौदग्ल्यायन, महा-काश्यप या नागार्जुन ही देगा, जब कि चौधरी चरण सिंह गाँधीवाद को उतोपिया के दायरे से व्यवहार की भूमि पर लाने वाले महा उपक्रमी हैं।

गाँधी और मार्क्स के दर्शन तथा आचार्य नरेन्द्रदेव के जीवन से प्रभावित, जयप्रकाश जी के दलविहीन लोकतन्त्र के सिद्धान्त से प्रतिबद्ध और अपने नगर के भगवान राम की मर्यादा तथा उन्हीं के वंशज 'महाभिषग् महाविभज्ज' बुद्ध के विचारों के प्रति आस्थावान होने से मैं आर्यसमाजी तथा पिछड़ा वर्गवादी चौधरी चरणसिंह को अपने राज-नीतिक आदर्श की परिधि के बाहर मानता था। संयोग से १९६५ में

जब मैं लखनऊ में 'आज' का विशेष प्रतिनिधि था, उत्तर प्रदेश के विभाजन की चर्चा के दौरान पण्डित श्रीकृष्णदत्त पालीवाल ने मुझे विभाजनवादी के रूप में अपना विश्वासपात्र समझा और चौधरी चरण-सिंह से मिलने तथा उनका साफ विचार समझने की राय दी। अतः मैं माल एवेन्यू स्थित उनके निवास पर रात में उनसे मिला और अपना परिचय देकर उत्तर प्रदेश के विभाजन के प्रश्न पर अपनी जिज्ञासा प्रकट की। मुझे आश्चर्य हुआ कि उन्होंने मुझ पर किसी प्रकार का अविश्वास किये बिना मंत्रिमण्डल का सदस्य रहते हुए भी विभाजन

जयप्रकाश जी के निष्ठावान सहयोगी तथा लखनऊ के दैनिक तरुण भारत के सम्पादक श्री श्यामाप्रसाद प्रदीप को बहुत कम अवस्था से ही राजनीतिक कार्यकर्ता और पत्रकार के रूप में देश विदेश के कई राजनेताओं के निकट आने और उनका विचार समझने का अवसर मिला है। उनका कहना है कि दादा धर्माधिकारी को छोड़कर किसी की भी दृष्टि किसानों के हित और उद्योग के क्षेत्र में गाँधीवाद को मूर्तरूप देने के सम्बन्ध में उतनी साफ नहीं है जितनी चौधरी चरण सिंह की। वे कान के कच्चे जरूर हैं, लेकिन जिस पर विश्वास कर लेते हैं, उससे धोखा खाना और कोई चीज न छिपाना उनका स्वभाव है। कुछ संस्मरणात्मक और कुछ व्याख्यात्मक ढंग से प्रदीपजी ने यहाँ भारत के स्वराष्ट्रमन्त्री की विशेषताओं का अधिकारी ढंग से विवेचन किया है।

का औचित्य प्रतिपादन बड़े ही ठोस आधार पर किया। उन्होंने कहा, बहुत बड़े आकार के कारण जिस राज्य में मन्त्रियों को अपने विभागों के जिला प्रधानों के नाम तक न मालूम हों; मध्य और पश्चिमी भाग के लोग यह भी न बता पायें कि गोरखपुर देवरिया के पूर्व में है या देवरिया गोरखपुर के पूर्व में, उसे युक्तिसंगत आधार पर दो या अधिक राज्यों में विभाजित किये बिना कुशल शासन व्यवस्था दी ही नहीं जा सकती। इसी प्रश्न पर दस साल बाद मैंने उनसे फिर वार्ता की और पूछा—'बाबूजी उत्तरप्रदेश का पुनर्गठन करके कितने राज्य बनाये जाने चाहिए ? तो उन्होंने कहा,—'दो' पूर्व और पश्चिम'। मैंने

कहा नहीं—भौगोलिक ही नहीं भाषा और संस्कृति के आधार पर भी उत्तर प्रदेश के पाँच भाग होने चाहिए—(१) पहाड़ी जिलों का उत्तराखण्ड राज्य, जो चाहे तो कालान्तर में हिमांचल प्रदेश के साथ एकीकृत हो सकता है, (२) मेरठ, आगरा और रूहेलखण्ड (पीलीभीत जिले को छोड़कर) कमिश्नरियों तथा राजस्थान के भरतपुर और मध्यप्रदेश के भिण्ड तथा मुरैना जिलों को मिलाकर ब्रज या पश्चिमी उत्तर प्रदेश, (३) झाँसी डिवीजन के जिलों को, मध्यप्रदेश के बुन्देली भाषी जिलों से मिलाकर बुन्देलखण्ड, (४) लखनऊ, इलहाबाद और फैजाबाद मण्डलों के १७ जिलों तथा बस्ती की हरैंया तहसील को मिलाकर अवध राज्य और (५) वाराणसी तथा गोरखपुर मंडल के ९ जिलों के साथ बिहार के भोजपुरी भाषी पश्चिमी जिलों को मिलाकर भोजपुर राज्य। मेरा तर्क सुनने के बाद उन्होंने मेरा सुझाव पसन्द किया और कहा, अब मेरी भी यही दृष्टि रहेगी।

वे जिस बात को सही मान लेते हैं, उसे तत्काल स्वीकार कर लेने में उन्हें कोई संकोच नहीं होता, लेकिन जो बात उन्हें असंगत लगती है उसे वे किसी कीमत पर स्वीकार नहीं करते। इमरजेन्सी के पूर्व उत्तर प्रदेश संघर्ष समन्वय समिति और संघर्ष संचालन समिति के सदस्य के रूप में मैंने जयप्रकाश जी और चौधरी साहब को निकट लाने के लिए लखनऊ से सिताबदियारा तक की दौड़ लगायी। चौधरी साहब से वाराणसी के सर्किट हाउस में वार्ता हुई हो या मुगलसराय से लेकर जौनपुर, आजमगढ़ होते हुए देवरिया और गोरखपुर तक जयप्रकाश जी के साथ दौरा करने का अवसर रहा हो, मैंने बराबर दोनों नेताओं को एक दूसरे के दृष्टिकोण से बराबर सहमत करने की कोशिश की। ऋषि-कल्प जे० पी० को किसी भी बात के लिए राजी करने में कभी दिक्कत नहीं हुई, लेकिन चौधरी चरण सिंह को मैं सम्पूर्ण क्रान्ति के पक्ष में कभी नहीं कर पाया। युवकों की सलाह से २७ अप्रैल १९७५ को मैं, मुख्तार

अनीस, सन्तोष भारती, शतरुद्र प्रकाश, रामदत्त त्रिपाठी आदि युवा नेताओं को साथ लेकर उनसे उनके निवास स्थान पर मिला और उन युवा नेताओं से कहलाया कि आप कल के सत्याग्रह में हमारा नेतृत्व कीजिए, तो उन्होंने साफ इन्कार करके कहा, 'प्रदीप, तुम तो विद्वान आदमी हो, सम्पूर्ण क्रांति के बारे में बहुत सम्पादकीय लिखा करते हो, लेकिन मेरी समझ में सम्पूर्ण क्रान्ति आती नहीं"। उन्होंने कुछ और भी बात कही। मैं सम्पूर्ण क्रान्तिवादी होते हुए भी इस बेलौस जवाब से प्रसन्न हुआ। वे अनुभवहीन एवं अपरिपक्व युवकों को जयप्रकाश जी की तरह क्रान्ति का अगुवा मान ही नहीं सकते। लेकिन दूसरे दिन हमने देखा कि उन्होंने सत्याग्रह में हमारा नेतृत्व करने के लिए माताजी (श्रीमती-गायत्रीदेवी) को भेज दिया, जो हम लोगों के साथ गिरफ्तार होकर थाने में भी गयीं और हम लोगों के बहुत अड़ने के बावजूद जब मजिस्ट्रेट ने किसी को सजा नहीं दी तो घर लौट आयीं।

अपनी जिद के लिए प्रसिद्ध चौधरी चरणसिंह आत्मीयजनों के सामने अपनी गलती मौनरूप में जरूर स्वीकार कर लेते हैं। १९७० में उन्होंने चतुर्भुजशर्मा आदि कांग्रेसी मन्त्रियों को अपनी सरकार से बर्खास्त करा दिया तो फैजाबाद के सर्किट हाउस में मैंने उनसे कहा, 'बाबूजी, आपने ज्यादती की। ऐसे निष्ठावान सहयोगी आपको कहाँ मिलेंगे जिनकी गैर जानकारी में आप विभागीय सचिव बदल दें तो भी वे जबान न खोलें।' उन्होंने कहा, बात तो ठीक कहते हो, फिर चुप हो गये।

उनका बहुत ही विमल रूप १९६७ के आम चुनाव के बाद देखने को मिला। बङ्गाल, बिहार, हरियाणा आदि में संयुक्त विधायक दल की सरकारें बन चुकी थीं। चन्द्रभानु गुप्त की सरकार में वे शामिल नहीं हुए थे। मैं उनके यहाँ शाम को जाता और कभी-कभी रात में देर तक रुक कर उनसे प्रार्थना करता कि आप उत्तर प्रदेश के अजय

और आँकड़े के इस तरह बोलते थे जैसे जनसभा में बोल रहे हों। यह बात उन्हें बहुत नापसन्द थी। एक बनारसी मन्त्री से उन्हे इसी कारण खासतौर से नाराजगी हुई तो उन सज्जन ने मुझसे अपना रोना रोया। मैंने चौधरी साहब से कहा, 'आप क्यों उनसे नाराज हैं, कुछ भी हो वह शोषितों, उत्पीड़ितों का साथ देने वाली पार्टी का ही है और आपके प्रति श्रद्धालु है। उन्होंने इस पर कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की, लेकिन उनकी नाराजगी कम हो गयी।

फिल्म जगत के एक व्यक्ति ने १९६७ में एक वृत्तचित्र बनाया, 'डेमोक्रेसी इन वर्किङ्ग'। बम्बई से लखनऊ आकर उसने बड़ी कोशिश की कि मुख्यमन्त्री चौधरी चरण सिंह वह चित्र देख लें। लेकिन वे तैयार नहीं हुए। कुछ लोगों की सलाह पर वह मुझसे मिला। उसका कोई गर्हित स्वार्थ न होने से मैंने चौधरी साहब से कहा—आप वह फिल्म देख क्यों नहीं लेते। वे फौरन इसके लिए तैयार हो गये और नावेल्टी सिनेमा में सपरिवार वह चित्र देखने के लिए आये।

चौधरी साहब अवस्था में ७५ साल से ऊपर जरूर हो गये हैं, लेकिन कई मामलों में उनका बच्चों जैसा भोला स्वभाव है। इसीलिये मुखर्जी बनिये, हम जैसे लोग जो सक्रिय राजनीति में नहीं हैं, नौकरी छोड़कर और झण्डा लेकर आपके पीछे चलेंगे। उन्हें यह बात कुछ जरूर अच्छी लगती लेकिन कांग्रेस छोड़ना उन्हें कष्टकर मालूम होता था। फिर एक दिन उन्होंने कहा, अपने मास्टर (श्री जयराम वर्मा) जी को समझाओ। और एक मास्टर जी थे कि उन्हें श्री चन्द्रभानु गुप्त की थैली के प्रभाव में बँधे किसी कांग्रेसी विधायक के अलग होने का विश्वास ही नहीं होता था। लेकिन हमारे जिले के चार अन्य कांग्रेसी विधायक दल छोड़ने के लिए बहुत जल्दी तैयार हो गये। उधर नानाजी देशमुख ने माताजी को समझाना शुरू किया। और फिर जो कमी थी उसे चन्द्रभानु गुप्त के इस बयान ने पूरा कर दिया कि "मैं जब तक

अनीस, सन्तोष भारती, शतरुद्र प्रकाश, रामदत्त त्रिपाठी आदि युवा नेताओं को साथ लेकर उनसे उनके निवास स्थान पर मिला और उन युवा नेताओं से कहलाया कि आप कल के सत्याग्रह में हमारा नेतृत्व कीजिए, तो उन्होंने साफ इन्कार करके कहा, 'प्रदीप, तुम तो विद्वान आदमी हो, सम्पूर्ण क्रांति के बारे में बहुत सम्पादकीय लिखा करते हो, लेकिन मेरी समझ में सम्पूर्ण क्रान्ति आती नहीं"। उन्होंने कुछ और भी बात कही। मैं सम्पूर्ण क्रान्तिवादी होते हुए भी इस बेलौस जवाब से प्रसन्न हुआ। वे अनुभवहीन एवं अपरिपक्व युवकों को जयप्रकाश जी की तरह क्रान्ति का अगुवा मान ही नहीं सकते। लेकिन दूसरे दिन हमने देखा कि उन्होंने सत्याग्रह में हमारा नेतृत्व करने के लिए माताजी (श्रीमती-गायत्रीदेवी) को भेज दिया, जो हम लोगों के साथ गिरफ्तार होकर थाने में भी गयीं और हम लोगों के बहुत अड़ने के बावजूद जब मजिस्ट्रेट ने किसी को सजा नहीं दी तो घर लौट आयीं।

अपनी जिद के लिए प्रसिद्ध चौधरी चरणसिंह आत्मीयजनों के सामने अपनी गलती मौनरूप में जरूर स्वीकार कर लेते हैं। १९७० में उन्होंने चतुर्भुजशर्मा आदि कांग्रेसी मन्त्रियों को अपनी सरकार से बर्खास्त करा दिया तो फैजाबाद के सर्किट हाउस में मैंने उनसे कहा, 'बाबूजी, आपने ज्यादती की। ऐसे निष्ठावान सहयोगी आपको कहाँ मिलेंगे जिनकी गैर जानकारी में आप विभागीय सचिव बदल दें तो भी वे जबान न खोलें।' उन्होंने कहा, बात तो ठीक कहते हो, फिर चुप हो गये।

उनका बहुत ही विमल रूप १९६७ के आम चुनाव के बाद देखने को मिला। बङ्गाल, बिहार, हरियाणा आदि में संयुक्त विधायक दल की सरकारें बन चुकी थीं। चन्द्रभानु गुप्त की सरकार में वे शामिल नहीं हुए थे। मैं उनके यहाँ शाम को जाता और कभी-कभी रात में देर तक रुक कर उनसे प्रार्थना करता कि आप उत्तर प्रदेश के अजय

मुखर्जी बनिये, हम जैसे लोग जो सक्रिय राजनीति में नहीं हैं, नौकरी छोड़कर और झण्डा लेकर आपके पीछे चलेंगे। उन्हें यह बात कुछ जरूर अच्छी लगती लेकिन कांग्रेस छोड़ना उन्हें कष्टकर मालूम होता था। फिर एक दिन उन्होंने कहा, अपने मास्टर (श्री जयराम वर्मा) जी को समझाओ। और एक मास्टर जी थे कि उन्हें श्री चन्द्रभानु गुप्त की थैली के प्रभाव में बँधे किसी कांग्रेसी विधायक के अलग होने का विश्वास ही नहीं होता था। लेकिन हमारे जिले के चार अन्य कांग्रेसी विधायक दल छोड़ने के लिए बहुत जल्दी तैयार हो गये। उधर नानाजी देशमुख ने माताजी को समझाना शुरू किया। और फिर जो कमी थी उसे चन्द्रभानु गुप्त के इस बयान ने पूरा कर दिया कि "मैं जब तक

बुलाया था। मैं जयप्रकाशजी का साथ छोड़कर गोरखपुर से वाराणसी आया और बातचीत में उनके सम्पूर्ण क्रांति से सहमत न होने पर कड़े विचार प्रकट कर दिये तो उन्हें बहुत दुःख पहुँचा।

चौधरी चरणसिंह आत्मीयजनों का पूर्ण विश्वास और प्रेम चाहते हैं तो पूर्ण विश्वास करते और स्नेह देते भी हैं। मैंने तो जब भी उनसे कोई बात पूछी, उन्होंने मुझसे कुछ भी नहीं छिपाया। वारागसी जिला जेल मे मुझे उनके जो भी पत्र तिहाड़ जेल या बाहर से मिले सबमें उन्होंने बहुत साफ और सही बात लिखी। मैंने भी उनसे प्राप्त जानकारी का कभी समाचार के रूप में उपयोग नहीं किया। उनके प्रथम मन्त्रि-मण्डल की बैठकों में कुछ सदस्य पुरानी आदत के अनुसार बिना तथ्य

और आँकड़े के इस तरह बोलते थे जैसे जनसभा में बोल रहे हों। यह बात उन्हें बहुत नापसन्द थी। एक बनारसी मन्त्री से उन्हे इसी कारण खासतौर से नाराजगी हुई तो उन सज्जन ने मुझसे अपना रोना रोया। मैंने चौधरी साहब से कहा, 'आप क्यों उनसे नाराज हैं, कुछ भी हो वह शोषितों, उत्पीड़ितों का साथ देने वाली पार्टी का ही है और आपके प्रति श्रद्धालु है। उन्होंने इस पर कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की, लेकिन उनकी नाराजगी कम हो गयी।

फिल्म जगत के एक व्यक्ति ने १९६७ में एक वृत्तचित्र बनाया, 'डेमोक्रेसी इन वर्किङ्ग'। बम्बई से लखनऊ आकर उसने बड़ी कोशिश की कि मुख्यमन्त्री चौधरी चरण सिंह वह चित्र देख लें। लेकिन वे तैयार नहीं हुए। कुछ लोगों की सलाह पर वह मुझसे मिला। उसका कोई गर्हित स्वार्थ न होने से मैंने चौधरी साहब से कहा—आप वह फिल्म देख क्यों नहीं लेते। वे फौरन इसके लिए तैयार हो गये और नावेल्टी सिनेमा में सपरिवार वह चित्र देखने के लिए आये।

चौधरी साहब अवस्था में ७५ साल से ऊपर जरूर हो गये हैं, लेकिन कई मामलों में उनका बच्चों जैसा भोला स्वभाव है। इसीलिये किसी बात पर वे रूठ जाते हैं तो बहुत जल्दो पिघल भी जाया करते हैं। लखनऊ के एक छात्र नेता ने उनके विरुद्ध प्रचार का बीड़ा ही उठा लिया था। १९६८ में वह उनके पास आया और बोला, आपके विरुद्ध मैंने जितना ही काम किया, मैंने देखा कि आप उतने ही मजबूत होते चले गये। बस फिर क्या था, चौधरी साहब औघढ़दानी शिव की तरह द्रवित हो गये और उसे न केवल विधानसभा के लिए भारतोय क्रान्ति-दल का टिकट दिया, बल्कि क्षेत्र मे पैदल चुनाव प्रचार करके उसे विधायक भो बनवाया। बाद में वह व्यक्ति साथ छोड़ कर कांग्रेस में भाग गया। वही क्यों इस तरह के कम से कम दो दर्जन विश्वासपात्र व्यक्तियों ने उन्हें धोखा दिया। यह जाहिर करता है कि चालू किस्म

के लोगों की उछलकूद से वे जल्दी प्रभावित हो जाते हैं, और सही परख न कर पाने के कारण धोखा खा जाते हैं। लेकिन विश्वास के मामले में वह गजब के ही हैं और किसी पर जल्दी विश्वास कर लेने और धोखा खाने की आदत नहीं छोड़ सकते। जयप्रकाश जी में धोखा खाने के अलावा उनसे अधिक गुण यह है कि वे मालूम हो जाने पर भी धोखे-बाज को ठुकरा देने के बजाय गले से लगाये रखते हैं।

अपनी आलोचना से रुष्ट हो जाना चौधरी चरण सिंह की कमजोरी है। दैनिक जनवार्ता (वाराणसी) के एक सम्पादकीय में मैंने उनके विषय में कुछ आलोचनात्मक ढंग से लिख दिया—"अपढ़ जाट पढ़ा जैसा पढ़ा जाट खुदा जैसा'। यह उन्हें बहुत ही बुरा लगा। उन्होंने अत्यधिक दुःखी होकर मुझे पत्र लिखा। फिर टेलीफोन पर अपने दुःखी होने का इजहार किया और एक दिन जब राजनारायणजी ने फैजाबाद में सरकिट हाउस से टेलीफोन पर कहा कि प्रदीप जी भी यहीं पर हैं तो उन्होंने मुझे फोन मिलवाकर फिर कहा, 'आपने मुझ पर जाती (व्यक्तिगत) तौर पर हमला किया, उससे मुझे बहुत दुःख हुआ है। हर बार मैंने यही कहा, 'बाबूजी, आप नाहक इतने भावुक हो रहे हैं, ऐसा तो हम पहले भी मजाक में कह चुके हैं, यह तो कहावत है। लेकिन मेरी बात से उन्हें सन्तोष नहीं हुआ। इससे कहीं-कड़ी आलोचना मैंने अपने दूसरे धर्मपिता जयप्रकाश जी की 'सम्पूर्ण प्रतिक्रान्ति' शीर्षक से लेख लिखकर की और उस लेख की कटिंग उनके पास जसलोक अस्पताल भेज दी। फिर गाँधी विद्या संस्थान के तत्कालीन निदेशक और मेरे मित्र नागेश्वर प्रसाद जी ने बम्बई में मेरा एक और 'विरोध पत्र' उन्हें इस बात के लिए दिया कि आपने सम्पूर्ण क्रान्ति और हमलोगों को जनता पार्टी का दुमछल्ला बना दिया है, तो जयप्रकाश जी दिल खोलकर हंसे और पत्रोत्तर में लिखा, 'सम्पूर्ण क्रान्ति की जिम्मे-दारी तो आप जैसे लोगों के कन्धे पर है'। मैं जमीन पर आ गया। वे

मानते हैं कि बाप से बेटा सवाया नहीं तो नालायक। मुझ जैसे व्यक्ति इस आदर्श को मानकर ही कभी-कभी आलोचनात्मक विचार व्यक्त करते हैं। इस तथ्य को चौधरी साहब जयप्रकाश जी की तरह समझते। समझ लें तो कुशल प्रशासक ही नहीं सचमुच देवता के रूप में पूज्य हो जायँ।

चौधरी चरण सिंह को सिफारिश से कभी प्रभावित नहीं किया जा सकता, लेकिन विश्वासपात्र बनकर उन्हें कितना भी बड़ा धोखा दिया और अपने विरोधी को दोषी बताकर उसके विरुद्ध काम आसानी से कराया जा सकता है। विश्वासघाती लोग इसका प्रायः अनुचित लाभ उठाते हैं।

मेरा बराबर यह विचार रहा है और मैंने लिखा है कि शोषणमुक्त, आत्मनिर्भर और राज्य के दबाव से स्वतन्त्र कृष्यौद्योगिक समाज की स्थापना के लिए उनकी दृष्टि सबसे ज्यादा साफ है। अतीत में जार्ज ओवेन, फौरियर, प्रूधों और सेण्ट साइमन जैसे समाजवादी विचारकों को छोड़ दिया जाय तो अन्य समाजवादियों और गाँधीवादियों ने भी पूँजीवाद और कम्युनिज्म दोनों की चुनौती स्वीकार करके दोनों की असंगतियों से मुक्त व्यवस्था की प्रभावकारी रूपरेखा नहीं प्रस्तुत की है। लेकिन चौधरी चरण सिंह ने यह चुनौती स्वीकार की और उसे जनता पार्टी की उद्योगनीति के रूप में प्रस्तुत किया। इस मामले में दादा धर्माधिकारी के बाद उनके विचार सबसे ज्यादा साफ और युक्ति-संगत है। उनके सोचने का ढंग औरों से अलग है। जवाहरलाल नेहरू और लालबहादुर शास्त्री की तरह वे छात्रों को पढ़ाई के बाद खेती में लगने की सलाह नहीं देते, बल्कि कहते हैं कि चार भाइयों में तीन भाई खेती छोड़कर गैरज़राती (कृष्येतर) कामों में लगें और यदि बाप स्वस्थ तथा सक्षम है तो चारो भाई खेती उसी के जिम्मे करके दूसरा काम करें। वे बताते हैं कि देवरिया और मेरठ बराबर जनसंख्या और

समान रूप से उपजाऊ भूमि के जिले हैं। किन्तु अधिक लोगों के गैर-ज़राती कामों में लगे होने से मेरठ जिला सम्पन्न है और देवरिया जिला कृषि पर अधिक भार होने से विपन्न। वे अपना पक्ष आँकड़ों के साथ प्रस्तुत करते हैं। अमेरिका में १८५० में ८७ प्रतिशत लोग खेती करते थे और १३ प्रतिशत लोग दूसरे काम। सौ वर्ष बाद १९५० में ठीक इसका उल्टा हो गया और अब तो ८ प्रतिशत लोग ही वहाँ खेती कर रहे हैं। इसी के फलस्वरूप अमेरिका सम्पन्न है और सारे संसार को अन्न दे रहा है।

उनका कहना है कि खेती पर बोझ कम करके श्रमिकों को कृष्येतर क्षेत्रों में लगाये बिना देश की गरीबी दूर हो ही नहीं सकती। खेती की उन्नति होने पर ही औद्योगिक विकास सम्भव है। लाखों लोगों को काम मिले, देश में बड़े-बड़े पूँजीपति न हों, व्यक्ति शोषणमुक्त और आत्म-निर्भर हो, इसके लिए गाँव में लघु एवं कुटीर उद्योगों का जाल बिछाना पड़ेगा। किसी वस्तु का बड़ा उद्योग तभी हो जब वह कार्य लघु या मध्यम उद्योग के रूप में न चलाया जा सके। राष्ट्रीयकरण उसी उद्योग का किया जाय जिससे एकाधिकार की समाप्ति और प्रतिरक्षा की दृष्टि सरकार के अधीन रखना अपरिहार्य हो। सम्पत्ति के समान बँटवारे के लिए जोत हदबन्दी का नियम कड़ाई से लागू किया जाना चाहिए, आदर्श खेती ढाई एकड़ से सत्ताइस एकड़ के बीच ही हो सकती है। खाद्यान्नों के मूल्य ८५ और ११५ प्रतिशत के बीच घटने-बढ़ने तक सरकार को व्यापार में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

चौधरी चरण सिंह का साफ कहना है कि १९४६ के बाद गाँव और शहर का अन्तर पहले से भी ज्यादा बढ़ गया है। स्वास्थ्य, आवास, परिवहन, बिजली और शिक्षा के क्षेत्र में गाँवों की उपेक्षा करके शहरों को तरजीह दी गयी है। केन्द्रीय सेवाओं में १४ प्रतिशत ही कृषक पुत्र आते हैं, बाकी सारे स्थान शहर के लोग छीन ले जाते

हैं। इस स्थिति को बदलने के साथ-साथ चौधरी साहब एक और परिवर्तन की बात करते हैं। उनका विचार है कि समाज का नेतृत्व जिन्हें प्राप्त है राजनीति का नेतृत्व भी उन्हीं के हाथों में नहीं होना चाहिए। यथार्थवादी दृष्टि से और ईमानदारी के साथ इसका पालन किया जाय तो इसमें दोष या असंगति नहीं है। लेकिन यह दृष्टिकोण आदर्श के अनुरूप नहीं है। हमारा उद्देश्य जातिमुक्त और सर्व धर्म समभावमूलक समाज की स्थापना करना है तो किसी भी स्तर पर जाति की दृष्टि से सोचना और नीति निर्धारण करना ऐसी असंगति एवं विद्वेष पैदा करेगा कि समाज में कटुता के अलावा कुछ रह ही नहीं जायेगा। चौधरी चरण सिंह रूपी सुन्दर शिशु के माथे पर नजर न लगने के लिए 'प्रकृति' रूपी माँ ने यही काला टीका लगा दिया है और सबकी नजर इसी पर जा टकराती है।

ईमानदार लोग प्रायः कान के कच्चे होते हैं। चौधरी चरणसिंह इसलिए कान के कच्चे हैं कि वह ईमानदार हैं। प्रशासनिक दृढ़ता के लिए तो उनकी सर्वाधिक प्रसिद्धि है। चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने तमिलनाडु में द्रमुक की पहली सरकार बनने पर अपने सहयोगियों के साथ आशीर्वाद लेने के लिए आये हुए अन्नादुरै को उपदेश दिया था कि सचिवालय के गलियारे को साफ रखिये। उनका मतलब था, सरकार इतनी दक्षता से काम करे कि किसी को भी मंत्रियों के पास न दौड़ना पड़े। चौधरी चरणसिंह उसके पहले से ही कहते आ रहे हैं कि लखनऊ और दिल्ली ठीक हो जाय तो सारा उत्तर प्रदेश और सारा देश ठीक हो जाये। जिले का कोई आदमी अपना काम कराने के लिए दौड़ा हुआ राजधानी में आये तो इसका मतलब है कि जिले का प्रशासन ठीक से काम नहीं कर रहा है।

चौधरी चरणसिंह कृषक पुत्र हैं। उन्होंने वे सारे काम किये हैं जो किसान के लड़के को करने पड़ते हैं। उन्होंने गाँव का जीवन जिया

है, किसानों और खेतिहर मजदूरों की समस्याओं को प्रत्यक्ष रूप से देखा और समझा है। इसीलिए गाँवों एवं ग्रामीणों के लिए उनके दिल में बहुत अधिक दर्द है, और इसीलिए उत्तर प्रदेश में उन्होंने जमीन्दारी उन्मूलन के लिए ऐसा अधिनियम बनाया जो सारे देश में बेजोड़ है। अपनी पसन्दगी और नापसन्दगी दोनों में मध्यममार्गी न होने और इस कारण विवादास्पद बन जाने के बावजूद वे देश के बेजोड़ राजनीतिज्ञ हैं। पूँजीपतियों से उनकी दोस्ती नहीं हो सकती, भ्रष्टाचार वे बरदाश्त नहीं कर सकते। वे मोरारजी की तरह निष्काम कर्मयोगी और जयप्रकाश जी की तरह द्रष्टा नहीं हैं, तो मुझ जैसे प्रशंसक को उनसे कोई शिकायत नहीं, लेकिन 'बाप से बेटा सवाया, नहीं तो नालायक' के आदर्श के अनुसार अपने बाद की पीढ़ी द्वारा लकीर से हटने और आलोचना की जाने को वे अप्रिय मानते हैं तो उससे जरूर दुख होता है।

भारतीय परम्परा में छोटी अवस्था के लोग अपने से बड़े लोगों के दीर्घ जीवन की कामना नहीं करते, बल्कि आशीर्वाद माँगते हैं। इसलिए ७५ वर्ष पूरे करके जीवन के चौथेपन में प्रवेश करने पर हम भी उनका सादर अभिनन्दन करते हैं।

•

डॉ० हरिहर नाथ त्रिपाठी

सत्ता और आदर्श के अन्तर्द्वन्द्व में कर्मठता चौधरी चरण सिंह

चौधरी चरण सिंह इस समय देश की राजनीतिक शक्ति के सबसे शक्तिशाली व्यक्ति हैं। फलतः उनका टकराव सीधा उसी व्यक्तित्व से हो गया है जो उनके पहले के दशक तक देश की राजनीतिक सत्ता का प्रतिमान बनी हुई थी। दोनों को आन्तरिक अन्तर्द्वन्दों से सदा गुजरना पड़ा है। हम उनमें से एक पर ध्यान दिलाना चाहते हैं जो चौधरी साहब के रचनात्मक कार्यक्रमों पर प्रकाश डालता है।

चौधरी चरण सिंह के शत्रु और मित्र दोनों में एक समानता है कि वे उनकी प्रशंसा और निन्दा आँख मूँद कर करते हैं। फलतः इनके सम्बन्ध में बहुत सी बातें सचाई से परे हो जाती हैं। सामान्यतया चौधरी साहब के विषय में उनके गुण विश्लेषण में इस प्रकार की बातें कही जाती हैं: वे सुपठित, कृषि समस्या के अधिकारी विद्वान और प्रयोक्ता, कर्मनिष्ठ, आदर्शात्मक राजनीति के प्रति प्रतिबद्ध, ईमानदार, कार्य और व्यवहार में असमझौतावादी, शत्रुता और मित्रता के प्रति स्पष्ट, आत्माभिमानी; सहयोगियों के प्राप्य के प्रति जागरूक, अनुशासन-प्रिय अतएव जिद्दी, जातिवादी राजनीतिक गुणों से सम्पन्न हैं। इन्हीं

गुणों के आधार पर चौधरी चरण सिंह जी सदा अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व लेकर कार्य करते रहे हैं।

राजनीतिक मान्यताओं में वे मूलतः आर्यसमाजी और अन्ततः गान्धीवादी रहे हैं। दोनों विचारधाराएँ उन्हें देशी राजनीति के समीप लाने के लिये बाध्य करती हैं। राष्ट्रवाद उनकी निष्ठा का प्रतीक रहा है। भारतीय गौरव के प्रति आर्यसमाजी भाव और समस्याओं के प्रति देशी दिमाग के फलस्वरूप सत्ता की राजनीति में गठबन्धन से जनता पार्टी के जन्म तक उन्हें सफलता इसलिये मिली कि समाजवादियों में देशी राजनीति और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जनमें भारतीय जनसंघ

राजनीति को दिशा देने वाले अनेक विशिष्ट पुरुषों के नख-शिख वर्णन में निष्णात डॉ० हरिहर नाथ त्रिपाठी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के राजनीति-शास्त्र विभाग में प्राध्यापक हैं। डॉ० त्रिपाठी मूलतः गम्भीर दृष्टि वाले प्राचीन शास्त्र के गहन अध्येता ही नहीं वर्त्तमान राजनीतिक गतिविधि पर पैनी और सूक्ष्म दृष्टि रखने वाले जगरूक चिन्तक भी हैं। उन्होंने चौधरी साहब को राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत लेख में आंका है।

के राष्ट्रवाद को समझने में उन्हें आसानी हुई। इसी प्रकार संघटन कांग्रेस के गाँधीवाद से उनका सहज सम्बन्ध रहा है। मात्र कुछ व्यक्तिगत कुण्ठाएँ थीं जिसे बहुत आसानी से आपात्कालीन स्थिति ने तोड़ दिया और सांप मेढक को एक स्थान पर ला दिया। इस स्थिति में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका चौधरी चरण सिंह की थी जिसने जनता पार्टी को जन्म दिया।

कांग्रेस के अधिक काल तक शासन में रहने, श्रीमती इन्दिरा गाँधी की विशेष प्रकार की कार्यपद्धति, राजनीति में संजययुग का जन्म विरोधी दल के लिए अपूर्व अवसर प्रदान करता रहा है। लेकिन देश में विरोधी दल का नाम ही नहीं था। इस स्थिति की अनिवार्यता ही

बना दिया गया। वे इसका प्रयोग सत्ता की राजनीति में कर ही नहीं सकते थे। आपात्काल की घोषणा के पूर्व अन्तिम क्षणों में तो ऐसा लग रहा था कि कहीं अप्रत्याशित प्रशस्ति में जयप्रकाशजी का 'दल-विहीन जनतन्त्र' का भाव जयप्रकाश जी को उन लोगों से अलग न कर दे जिन दलों के लोगों के माध्यम से उनका व्यक्तित्व बन रहा था। यह खतरा उस समय और बढ़ा जब वे राजनारायण और चौधरी चरण सिंह जी से भी मिलने से कतराने लगे। सारा आन्दोलन अजगर के समान व्यवहार विहीन हो गया था।

बिना किसी व्यावहारिकता के लोकनायक जी अपने सहयोगियों के साथ जेल यात्री हो गये। आपात्कालीन स्थिति ने श्मशान की शान्ति प्राप्त की। लगा, देश ने इन्दिरा के साथ समझौता कर लिया। श्री संजय के करतबों ने इतनी भूमि तैयार कर दी थी कि अब सक्रिय व्यक्तित्व की

आवश्यकता थी। जयप्रकाश जी और अन्य लोग छूटे। कोई खास प्रतिक्रिया नहीं सामने आयी। जयप्रकाशजी हताश से नजर आये और कदम कुंआ में केन्द्रित हो गये। कुछ पत्रव्यवहार ही हाथ रहा।

चुनाव घोषणा के साथ दो व्यक्तित्व सामने आये-श्रीमोरारजी भाई और श्री चौधरीचरण सिंह। देश में किसी को जयप्रकाश जी में मोह रहा हो किन्तु इन दो व्यक्तियों को इसमें रंच मात्र भी मोह नहीं दीखा। वे जनता के सामने चुनाव के लिए सीधे अपने तरीके पर आ गये। श्री मोरार जी ने नेतृत्व संभाला और चरण सिंह ने उसमें सक्रिय सहयोग दिया। जनसंघ का भी शक्तिमद टूट चुका था। उसका मुख्य लक्ष्य था किसी मूल्य पर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का 'गजेन्द्रमोक्ष'। फलतः इस बार उसने किसी प्रकार के टाल मटोल से हट कर मात्र एक ही लक्ष्य रखा—इन्दिरा हटाओ। इस स्थिति के लाभ में मोरार जी और चरणसिंह ने जयप्रकाश जी की अगुआई की दूसरी पंक्ति में रख दिया। परिणाम में

देश को स्पष्ट "राजनीतिक नेतृत्व" प्राप्त हुआ। हवा के साथ लोग मुड़ने लगे। जगजीवन बाबू भी ससम्मान इस पलड़े पर आ गये। राजनीति बदली। दुनिया के इतिहास में अभूतपूर्व मतदान हुआ। जनता पार्टी शक्तिस्तम्भ के रूप में सामने आयी।

सत्ता की भाषा में अब लोगों के तेवर बदल गये। प्रश्न था प्रधान-मन्त्री पद का। गणित की भाषा में अपने-अपने सदस्य जोड़े जाने लगे। गांधी जी का भी सपना कुछ लोगों को दिखायी देने लगा कि देश का प्रधान मन्त्री कोई हरिजन ही होना चाहिए। सत्ता की तर्क प्रणाली के साथ गांधीवाद का कितना रिश्ता था कि इसने यह भी नहीं देखा कि देश में कांग्रेस का विकल्प व्यक्ति नहीं संस्था हो सकती है, उसमें संस्था को सत्ता के उच्च प्रतिष्ठान पर रखा जाय या सत्ता के लिए आये व्यक्ति को, वह भी महज जाति के नाम पर। इस अवसर पर सबसे निर्णायक स्थिति थी चौधरी चरणसिंह जी की। वे अस्पताल में थे। उन्होंने नेतृत्व के लिए मोरार जी के पक्ष में जिस प्रकार अपना अभिमत दिया उससे सरकार गठन का कार्य व्यावहारिक रूप ले पाया।

इस हद तक चौधरी साहब की सत्ता की राजनीतिक यात्रा पूरी होती है। इसके बाद गृहमन्त्री के रूप में उन्होंने आपात्कालीन स्थिति में हुई ज्यादतियों के उद्‌घाटन में अपने को उलझा दिया है अनेक राज-नीतिक और मनोवैज्ञानिक कारणों से यह आवश्यक भी रहा है किन्तु अब उनका दायित्व अधिक है। वे मोरारजी मन्त्रिमंडल के गृहमन्त्री ही नहीं, देश की नयी राजनीति के अन्यतम व्यक्तियों में से है। यदि शाह-आयोग के आसपास ही उनका व्यक्तित्व मंडराता है तो यह देश के लिए गम्भीर स्थिति पैदा कर देगा। उनके साथ लगे घटक भविष्य के प्रति जागरूक हैं। जिस आदर्श की राजनीति का स्वप्न चरणसिंहजी संजोये हैं, उसकी प्रतीक्षा के लिए उनके पास समय अधिक नहीं है। देश में कुछ राजनीतिक मूल्य बन चुके हैं, बन रहे हैं और अधिक बनने

शेष है। जनतापार्टी को इनमें अपना स्थान बनाना शेष है। सत्ता की मृगमरीचिका कभी भी स्थायी नहीं हो सकती।

चरणसिंह जी में आर्यसमाज और गांधीवाद का जो सम्मिश्रण है वह एक दूसरे का पूरक है। लोहिया या अन्य समाजवादियों के मन में जमी समाजवादी राजनीति और इसमें जमी देशी राजनीति की आस्था का वे योगदान सैद्धान्तिकता के धरातल पर आसानी से ले सकते हैं। इस अंश में उन्हें कार्य करना आवश्यक है। यह सुयोग है कि उनके पास जुड़े लोगों की आस्था भी इस राजनीति के साथ है। उसे सैद्धान्तिक और व्यावहारिक रूप देना बहुत सम्भव कार्य है। इस सम्बन्ध में अधिक प्रतीक्षा किये बिना एक सामान्य कार्य तो चरणसिंह जी कर ही सकते हैं, अपने मन्त्रालय से सम्बद्ध प्रशासनिक सेवाओं के पाठ्यक्रम में सुधार।

इधर जनतापार्टी के सामने भी वही प्रश्न आया है, नौकरशाही के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का। यह सर्वविदित है कि हमारे देश की लोकसेवा का सारा आधार ब्रितानी है। इसका मिजाज, चरित्र, सोच सभी गैरदेशी है। फलतः इसमें देश के प्रति आने वाली निष्ठा का अभाव जाहिर है। इसकी प्रतिबद्धता, इसकी मध्यमवर्गीय खोखली संस्कृति की श्रेष्ठता में है। इसमें अपने देश के साथ लगाव का कहीं नामोनिशान ही नहीं। आश्चर्य है कि लोकसेवा परीक्षा के वे ही पाठ्यक्रम अभी भी चल रहे हैं, जो ब्रितानी हुकूमत में थे। इसमें न तो भारतीय राजनीति है न तो संस्क्रति। जो है भी वह उनकी देन है जो या तो मास्को के प्रगतिप्रकाशन से प्रेरणा लेते हैं या १९ वीं शती के ईसाई धर्म प्रचारकों के देशद्रोही साहित्य का अपने नाम पर पुनर्मुद्रण करा रहे हैं। यह प्रश्न अत्यन्त महत्वपूर्ण है। लोकसेवा के लिए वैदिकराजनीति एवं भारतीय राजनीति जैसे विषयों को अनिवार्य रूप से प्रस्तुत करना हमारी प्रथम आवश्यकता है। इसी आधार पर पूरे पाठयक्रम को बदला जाय।

यह रही एक अत्यन्त सामान्य बात। देश में राजनीतिक संस्कृति के निर्माण के लिए व्यापक स्तर पर कार्य करना जनतापार्टी का प्राथमिक दायित्व है। यह कार्य सामूहिक रूप में होना चाहिए। लेकिन चौधरी-साहब ने सत्ता की राजनीति में जो सफलता पायी उसका उद्देश्य सत्ता-भोग न होकर उन आदर्शों के प्रति प्रतिबद्धता होनी चाहिए जिससे वे प्रेरणा प्राप्त करते रहे हैं। उनके जैसे व्यक्ति से यह आशा वे सभी कर रहे हैं जो उनके निर्देश में राजनीतिक कार्य कर रहे है। हमें आशा है कि चौधरी साहब इस पर ध्यान देंगे।

•

राम नरेश यादव
मुख्य मंत्री, उत्तर प्रदेश

चौधरी चरण सिंह दृढ़ता और ईमानदारी के प्रतीक

लौह पुरुष चौधरी चरण सिंह भारत माता के एक ऐसे महान सपूत हैं, जिनके रोम-रोम से देश-भक्ति और जनकल्याण की ज्योति फूटती है, और जो देश-हित के लिए बड़ा से बड़ा त्याग करने में तनिक भी आगा-पीछा नहीं करते। चौधरी साहब विलक्षण प्रतिभासम्पन्न एक ऐसे क्रान्तदर्शी राजनीतिज्ञ हैं जो देश के इतिहास में अपनी दूरदर्शिता, दृढ़ता और ईमानदारी के लिए सदा स्मरण किये जाते रहेंगे।

कल्पना कीजिए कि भारत पर अपना शिकंजा मजबूती के साथ कसा रखने के लिए ब्रिटिश सरकार ने जिस जमींदारी प्रथा का कई शतियों में विकास किया था और जो देश के कोटि-कोटि किसानों और गरीबों पर कहर ढा रही थी, उसे समाप्त करने के लिए, और वह भी तुरन्त, कितनी विलक्षण बौद्धिक कुशलता की आवश्यकता पड़ी होगी। यह हमारे चौधरी साहब ही थे, जिन्होंने अंग्रेजों की कुटिल व्यूहरचना के सबसे मजबूत दुर्ग को अपने एक ही वार में ध्वस्त कर दिया। उनके इस अत्यंत बुद्धिमत्तापूर्ण कार्य से देश और विदेश में उनकी प्रशंसा तो हुई ही, साथ ही प्रदेश के लाखों किसानों, गरीबों, शोषित, दबे, थके

तथा सदियों से उत्पीड़ित, शोषित और उपेक्षित लोगों के घरों में जिन्दगी की रोशनी फैल गयी और लोगों ने आजादी की साँस ली।

स्वतंत्र चेतना और निर्भीकता के प्रतीक

चौधरी साहब अपनी स्वतंत्र चेतना एवम् निर्भीकता के लिए मशहूर हैं। उस समय भी जब बड़े-बड़े देशभक्त कहे जानेवाले लोग कांग्रेस की नीतियों में विश्वास न होने के बावजूद उससे अलग होने का साहस नहीं करते थे, क्योंकि वे जानते थे कि कांग्रेस से अलग होने का मतलब राजनीतिक आत्म-हत्या थी, यह इसी लौह व्यक्ति का जीवट था जिसने कांग्रेस से अलग होकर न केवल उसकी किसान-घातक प्रगति-विरोधी नीतियों का विरोध किया बल्कि कांग्रेस के विकल्प में एक सुदृढ़ राज-

समय की कसौटी पर वह खरी भी उतरी है कि गाँवों के विकास के लिए अधिकारतंत्र गाँव के निवासियों के हाथ में होना आवश्यक है क्योंकि शहरी वर्गों से उभरे देश के नेतृत्व को देश की ८० प्रतिशत ग्रामीण जनता की परिस्थितियों की न तो सही अनुभूति होती है और न उनमें वह संवेदनशीलता पायी जाती है, जो गाँवों के किसानों, मजदूरों, कारीगरों और गरीब बेसहारा लोगों के हृदय को छू सके। गोबर-मिट्टी से दूर पक्की (मेटल्ड) सड़कों पर चलने वाले लोगों को, जो नाजुक और आरामदेह जिन्दगी बिताने के आदी हैं, गाँवों की वह चिन्ता हो ही कैसे सकती है जो वहाँ के कठोर और अभावग्रस्त जीवन का मर्म समझने वाले किसी ग्रामीण को होगी। समय ने सिद्ध कर दिया है कि चौधरी साहब की धारणा शत-प्रतिशत सत्य साबित हुई। कांग्रेस

को गाँवों के प्रति उपेक्षापूर्ण नीतियों का ही परिणाम है कि आज तीस वर्षों के बाद भी हमारी समस्याएँ सुलझने के बजाय उलझती ही गयीं। चौधरी साहब का बहुत पहले से ही यह निश्चित विचार था कि देश की विशाल श्रम-शक्ति का सदुपयोग ही हमारी समस्याओं का एकमात्र हल है। हमारे यहाँ रूस और अमेरिका के विपरीत, जहाँ प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता और श्रम-शक्ति की कमी है, भूमि कम और जनसंख्या अधिक है। हमें अपने यहाँ खेती और उद्योग दोनों ही क्षेत्रों में ऐसी तकनीक अपनानी होगी जिससे भूमि की प्रति एकड़ पैदावार बढ़े और उद्योगों में प्रति इकाई अधिक लोगों को रोजगार मिले। इस नीति की उपेक्षा के कारण ही हमारे सामने गरीबी, बेरोजगारी और आर्थिक विषमता जैसी समस्याएँ आज भी मौजूद हैं। देश के विकास के उपायों और नीतियों के बारे में जितना ठोस, तर्कसंगत, अनुभव-परक और स्पष्ट चिन्तन चौधरी साहब का है वह अन्य किसी में दुर्लभ है। खेती में वे बड़े फार्मों के चाहे वे सहकारी, सरकारी या निजी हों, विरोधी हैं। उनके विचार से भूमि का अधिकतम उपयोग करने के लिए उसकी अधिकतम और न्यूनतम सीमा निर्धारित होनी चाहिए। ऐसे ही उद्योगों के क्षेत्र में उनकी स्पष्ट मान्यता है कि उपयोग की अधिकांश वस्तुओं का उत्पादन ग्रामीण एवम् कुटीर उद्योगों द्वारा किये जाने से ग्रामीण दस्तकारों की आर्थिक दशा में सुधार होगा। जो वस्तु इनमें न बन सके उसे लघु उद्योगों द्वारा तथा जो उनमें भी न बनायी जा सके उसे बड़े उद्योगों द्वारा तैयार कराया जाय। इस प्रकार इनका उत्पादन क्षेत्र निश्चित करना होगा और ऐसा उपाय करना होगा कि बड़े उद्योग छोटे उद्योगों पर हावी न होने पायें।

ये दोनों ही उपर्युक्त विचार चौधरी साहब के ऐसे हैं, जो अकाट्य हैं, और अगर ईमानदारी से पिछले वर्षों में इन पर अमल किया गया होता तो निःसंदेह आज की अधिकांश समस्याएँ पैदा ही न हुई होतीं। अर्थ

के सारे साधन जो आज शहरों में केन्द्रित होते जा रहे हैं, वे विकेन्द्रित होकर गाँवों की ओर मुड़ गये होते और आर्थिक विकेन्द्रीकरण के आधार पर राजनीतिक शक्ति के विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया सही माने में उभर आयी होती।

प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा के पोषक

चौधरी साहब की सामान्य सामाजिक मान्यता शुद्ध भारतीय प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा के अनुकूल है। उन्हें जाति-पांति, ऊँच-नीच, अमीर-गरीब जाति भेदभावों की दीवारों की ऊँचाइयाँ बाँध नहीं सकतीं। उत्तुंग हिम शृंखला पर खड़े निर्विकार व्यक्ति की भाँति सामाजिक अभिशाप के सारे बन्धनों से वह बहुत ऊपर हैं। जो लोग उन्हें जातिवादी कहने का दुस्साहस करते हैं, निश्चय ही उनकी आँखें असलियत की ओर से मुँदी हुई हैं अथवा वे जानबूझकर अपना कलंक उनके सिर मढ़ने का दुश्चक्र रचते हैं। महर्षि दयानन्द के उद्बोधनों से प्रेरित यह सच्चा भारतीय भाग्यवाद, कर्मफल व जन्म के आधार पर जाति-पाँति की कुप्रथा को समाप्त करने के लिए सदैव तैयार रहा है और उस दिशा में निरन्तर अथक प्रयास करता रहा है और आज भी सतत् प्रयत्नशील है।

विश्व के प्रसिद्ध प्रशासकों की श्रेणी में चौधरी साहब की गणना किया जाना उचित ही है, क्योंकि प्रशासक के सारे गुण उनमें अपनी चरमसीमा पर हैं। प्रशान्त धीर स्वभाव, मितभाषिता, समय पर समुचित सावधानी के साथ प्रशासनिक कदम, चौधरी साहब की अपनी विशेषता है, जो भारत के बहुत कम प्रशासकों में पायी जाती है। कुछ लोग चौधरी साहब की दृढ़ता और समयोचित निर्णयों को ध्यान में रखकर उनकी तुलना सरदार वल्लभ भाई पटेल से करते हैं। किन्तु मेरा विश्वास कि सरदार के समय की परिस्थितियों, देशवासियों की उत्कट देश-भक्ति और महात्मा गांधी के शान्तिप्रिय आदर्शों में उनकी आसक्ति उन्हें अपना

कार्य पूरा करने में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुई थी, लेकिन आज तीन दशकों के बाद विश्व में राजनीतिक और आर्थिक सभी प्रकार की मान्यताएं बदल चुकी हैं और विशेषकर भारत में चरित्र-ह्रास की गति तीव्र से तीव्रतर होती जा रही है। परस्पर आस्था और विश्वास की भावना काफी घट चुकी है। जन-जन में, घर-घर में, क्षेत्र-क्षेत्र में स्वार्थ-पूर्ण कलह ने आसन जमा लिया है। ऐसी स्थिति में देश की बागडोर संभालना निश्चय ही उस समय की अपेक्षा काफी दुरूह और कठिन कार्य है। इस कार्य की दुरूहता तब और बढ़ जाती है, जब हम देखते हैं कि तीस वर्ष के शासन के बाद बहिष्कृत राजनीतिज्ञ देश में राजनीतिक अस्थिरता उत्पन्न करने के अपने योजनाबद्ध कार्य में तन्मयता से जुटे हुए हैं। सोचिए, उस व्यक्ति के कलेजे की दृढ़ता, जो देशव्यापी तमाम झंझावातों को झेलता हुआ अकेला अविचल अपने कार्य में सफलता पूर्वक आगे बढ़ता चला जा रहा है। यह हैं हमारे चौधरी साहब, जिन्हें बड़े से बड़ा प्रलोभन लुभा नहीं सकता, बड़े से बड़ा कष्ट डिगा नहीं सकता।

अभी कुछ महीने पूर्व देशव्यापी तानाशाही को समाप्त करने में चौधरी साहब की अप्रतिम सूझबूझ तथा जनता पार्टी के गठन में उनकी सामंजस्य बुद्धि एवम् दूरदर्शिता की जितनी प्रशंसा की जाये वह थोड़ी है। कुल मिलाकर देश में दूसरी आजादी का सुप्रभात लाने में चौधरी साहब की भूमिका बेजोड़ थी और देश के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखी जायेगी। जनता पार्टी सरकार के अस्तित्व में आने के पश्चात् देश के समक्ष उपस्थित समस्याओं का समाधान गृह मंत्री जी स्वयं जिस कुशलता से कर रहे हैं, उससे आज देश में उनकी ख्याति किस प्रकार तेजी से बढ़ रही है और जनता में अपनी सुरक्षा एवम् न्याय पाने के अधिकार के प्रति जिस प्रकार पूर्ण रूप से आश्वस्तता है, उसकी अनुभूति आज देश की कोटि कोटि जनता कर रही है।

●

कार्त्तिकेय

बेइमानी के खिलाफ गुस्सा ही नहीं सोटा भी

इस मुल्क के राजनीतिक जीवन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू रहा है—किसान। पिछले ३००-४०० सालों में—यदि छिटपुट प्रयासों को छोड़ दें—देश के किसानों ने कभी विद्रोह नहीं किया। न ही इसको सत्ता और राजनीति में समुचित हिस्सा मिला। संभवत: इसका कारण रहा है, इस वर्ग से आया नेतृत्व, जो ग्रामीण इलाकों से शहर में आकर और भी ज्यादा शहरी हो गया और अपने मूल आधार को भूलकर उसे सिर्फ भुनाता रहा। इस कमी को पहली बार चरण सिंह ने भारतीय राजनीति में पूरा किया है।

चौधरी साहब का राजनीतिक जीवन बेहद उथलपुथलपूर्ण और उत्तेजक रहा है। जीवन के प्रारंभ में गरीबी के खिलाफ लड़ता एक किसान का बेटा १९७७-७८ में 'इंटैलैक्चुअल्स' की नज़रों में दक्षिणपंथी, प्रतिक्रियावादी कैसे बन गया यह खुद में एक किस्सा है।

जो लोग चरण सिंह को जानते हैं, उन्हें मालूम है कि यह व्यक्ति दृढ़ विश्वासों और अनुशासन में यकीन रखता है। और इसी दृढ़ता के साथ इस व्यक्ति की एक अच्छाई-कमी है कि यह किसी से भी भारी घृणा करता है या प्यार। बीच का व्यवहार इसके पास नहीं है।

राजनीतिक विचारों में पुराने माने जाने वाले चरण सिंह के साथ आज देश का एक बहुत बड़ा वर्ग क्यों है ? और चरणसिंह के खिलाफ एक बड़ा गुट क्यों है ? दोनो का जवाब काफी मजेदार होगा। क्योंकि राजनीति के बदलते नक्शे का यह सही ध्रुवीकरण है। जो लोग चरण सिंह के साथ हैं, उनकी अलग-अलग तस्वीरें हैं। किसान इसलिए साथ है, क्योंकि वह मानता है कि राजनीति में ईमानदारी और स्पष्ट रूप से उसके हितों की रक्षा करने की कोशिश यदि किसी ने की है, तो वह यही व्यक्ति है। बाकी जो लोग चरणसिंह के साथ हैं, उनकी स्पष्ट मान्यता है कि अपनी अनेक राजनीतिक कमजोरियों के बावजूद यह व्यक्ति नितान्त ईमानदार है और यह चाहे कुछ भी हो सकता है,

---

कार्त्तिकेय उपनाम से लिखनेवाले युवा और तीखे पत्रकार ने चरण सिंह के उस तेवर पर प्रकाश डाला है जिसके लिए चौधरी साहब आम अवाम में पसन्द किये जाते हैं। देश की राजनीति में कम ही ऐसे लोग हैं जो भ्रष्ट नहीं हैं। मगर भ्रष्टाचार मिटाने और अनुशासन लाने के प्रति कौन कमर कसकर आगे आता है। कार्त्तिकेय की लेखनी ने चौधरी साहब की इस तस्वीर को बखूबी उतारा है।

बेईमान नहीं। इसी वर्ग का चरण सिंह के प्रति आकर्षण का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण है—चरणसिंह का बड़े उद्योगों के खिलाफ होना। बड़े उद्योग पं० नेहरू की अर्थनीति की देन हैं, जिसमें किसान और गाँव को समुचित स्थान कभी नहीं मिल सका। पहली बार किसी राजनीतिज्ञ ने आर्थिक पहलू उठाकर देश में 'नेहरू मिथ' तोड़ने की कोशिश की। चरण सिंह के इस प्रयास में वे अनेक शक्तियाँ उनके साथ हो ली हैं जिनका चरणसिंह से कोई कभी वास्ता नहीं रहा।

चरण सिंह के खिलाफ कौन हैं ? वे लोग जो नेहरू के नाम पर राजनीति की दुकान जमाये हैं, वे जो बड़े उद्योगपति और पूँजीशाह

हैं, वे जो ऐसी किसी भी अर्थनीति को भारत में लागू होता देखना पसंद नहीं कर सकते जिससे साम्यवाद का देश में घुसने का रास्ता सदा के लिए बंद हो जाये।

झूठे प्रचार और लानत भेजने वाले भी चरणसिंह के खानदान में एक भी संजय क्रान्ति नहीं खोज पाये। शायद ही किसी राष्ट्रीय नेता के परिवारी जनों की आर्थिक दशा, इतनी जर्जर हो, जितनी

मुझसे चौधरी चरण सिंह जी से पहली बार भेंट १९५७ में हुई जब मैं उत्तर प्रदेश की विधान सभा में विरोधी दल का एक सदस्य था और चौधरी साहब माल मंत्री। अपने विधायक जीवन का पहला कार्य मैंने प्रारम्भ किया जिसमें मैंने माँग की कि उत्तर प्रदेश और बिहार की स्थायी सीमा होनी चाहिये। पहले दिन जब मैंने यह प्रश्न सदन में उठाया तो उस दिन चौधरी साहब मेरी बात को पूरी तरह समझ नहीं पाये। उन्होंने मुझे बुलाया और उस समस्या को समझने का प्रयास किया। चौधरी साहब जब मुख्य मंत्री हुए त्रिवेदी कमीशन द्वारा उन्होंने उत्तर प्रदेश और बिहार की स्थायी सीमा निर्धारित करा दी।

कि गृह मंत्री के खानदानियों की है। अंग्रेजीदाँ इस आदमी से अत्यधिक और सर्वाधिक भयभीत हैं। कारण दो हैं, एक—बिना किसी विश्व हिन्दी सम्मेलन या फतवे के यह आदमी राष्ट्रभाषा को उसका सही स्थान दिला रहा है। दो—कि यह आदमी देश की राजनीति को रेस्तराँओं, क्लबों, शहरों से छीनकर कस्बों, मोहल्लों और गाँवों में

ले जा रहा, यह इस वर्ग विशेष के लिए काफी घातक होगी। राजनीति निहित स्वार्थी के हाथों से निकलकर आवाम के बीच फैले यह इन्हें कैसे बर्दाश्त हो ?

इसीलिए भारतीय राजनीति में चरण सिंह का सर्वाधिक महत्वपूर्ण रोल है। यह व्यक्ति नये परिवर्तन का प्रतीक इस माने में बन चुका है कि पहली बार कुछ मुद्दों पर किसी ने जुबान खोली है। चरण सिंह 'चेयर सिंह' हो सकता है पर 'करप्शन सिंह' कभी नहीं।

वर्तमान सरकार में यही एकमात्र व्यक्ति है, जिसका नज़रिया स्पष्ट है। सही या गलत, जो एक ठोस आर्थिक नीति दे सकता है। सोच और

दूसरी बात मैं कभी नहीं भूलता हूँ। जब उत्तर प्रदेश के समाजवादियों ने शिकमी का आन्दोलन चलाया जिसमें हम लोगों ने यह माँग की कि जमीन जो जोतता है उस पर उसका अधिकार मान लिया जाये। यह लड़ाई उस समय तक बंगाल या केरल कहीं नहीं हुई थी। चौधरी साहब ने खेत के कब्जे वाले का चाहे वह जबरदस्ती का ही कब्जा क्यों न हो उस पर जोतने वाले का अधिकार मानकर उसको कानून का अंग बना दिया। भारतवर्ष के भूमि सुधार कानूनों में ऐसा प्रगतिशील कोई कानून आज तक पश्चिम बंगाल और केरल में भी नहीं बना।

—गौरीशंकर राय

कर्म की दृष्टि से स्पष्ट चरण सिंह फिलहाल इस देश के लिए इसलिए भी अनिवार्य हैं कि अन्य नेता चाहे बेईमान न हों पर उनमें बेईमानी के प्रति गुस्सा नहीं है। जब कि चरण सिंह में बेईमानों और बेईमानी के खिलाफ गुस्सा ही नहीं सोटा भी है। •

सत्यपाल मलिक

नेहरू, नेहरू का बुत और चरण सिंह

कल तक जिस चौ० चरण सिंह को सुनी सुनाई बातों के आधार पर शहरी सम्भ्रान्त वर्ग कोई न कोई अन्यायपूर्ण टिप्पणी देकर टाल जाना चाहता था, आज उसके लिए चौ० चरण सिंह को ठीक तरह से जान लेना एक जरूरत हो गई है। अब देश के हर कोने में जिज्ञासा है यह जानने की कि आखिर यह व्यक्ति कौन है, कैसा है, जिसके दुश्मन भी उसकी नैतिकता और ईमानदारी का लोहा मानते हैं, जो भारत के 'हृदय देश' के पिछड़ों और किसानों का मसीहा है, जो गाँव से दिल्ली आया है और आर्थिक नियोजन पर थीसिस दे रहा है ? क्या है उस व्यक्ति का इतिहास और कैसा है उसका रूप-रंग। जो किसी भी दाम पर खरीदा ही नहीं जा सकता और जो ३०-४० बरस की सत्ता की काली कोठरी में रहकर भी बेदाग रहा है।

चौ० चरण सिंह को उनकी साफगोई, सहजता और कायदा कानून पसन्दगी की वजह से कई बार गलत समझा जाता रहा है। मैं यहाँ कुछ ऐसे मुद्दों का ज़िक्र करना चाहूँगा जिन पर वे विवादास्पद रहे हैं मगर इनके कारण देश की राजनीति में इनका एक अलग और विलक्षण स्थान है।

१९६९ के भारतीय क्रांति दल के घोषणापत्र में चौधरी साहब ने शुरू ही में लिखा था कि वे राजनैतिक भ्रष्टाचार को समाप्त करने का

स्थायी उपाय करेंगे और कोई सफेदपोश अपराधी कानून की ज़द से बच नहीं सकेगा। मुझे याद है, जनता पार्टी के एक आला अफसर ने जो उस समय कांग्रेस के बड़े नेता थे, चौधरी साहब के इस कथन की खिल्ली उड़ाई थी और कहा था कि भ्रष्टाचार की समाप्ति कोई राजनैतिक कार्यक्रम नहीं है। मगर वक्त ने साबित कर दिया कि कांग्रेस को यही बीमारी खा गई और जयप्रकाश जी के आन्दोलन का मूल आधार यही बात बनी। राजनैतिक भ्रष्टाचार की समाप्ति यदि आज जनता पार्टी का मुख्य कार्यक्रम नहीं बना तो जनता पार्टी के भविष्य के सामने भी प्रश्नचिह्न लग जायेगा।

चौधरी चरण सिंह का व्यक्तित्व हमेशा से ही विवाद का विषय रहा है। आरोपों की बौछार भी अखबारों और वक्तव्यों में होती रहती है। मगर इन अनाप शनाप आरोपों में कितना दम है? श्री सत्यपाल मलिक, जो सक्रिय राजनीति में निरन्तर लगे रहे हैं, उन्होंने इन आरोपों और प्रहारों की ब्योरेवार सफाई देने की कोशिश इस सशक्त लेख में की है और एक अच्छे वकील की तरह इसमें कामयाब भी हुए हैं।

राजनैतिक दलों की कार्यप्रणाली क्या हो, इस विषय पर चौधरी साहब के विचार बहस का मुद्दा रहे हैं। इस पर उन्होंने बहुत पहले कह दिया था कि यदि घेराव, प्रदर्शन, हड़तालें व हिंसक प्रदर्शन आदि हमारी दैनिक सभ्यता बन गये तो सत्तारूढ़ दल निरंकुश होता जायेगा और किसी दिन इसी बहाने तानाशाही कायम हो जायेगी। वे सत्तारूढ़ दल व विपक्ष दोनों को एक आचरण-संहिता का पालन करने के हामी रहे हैं। जनता पार्टी जल्दी ही महसूस करने लगेगी कि इस विचार में कितना दम है। कुछ लोग चौधरी साहब के कानून, व्यवस्था तथा आचरण में आस्था वाले विचारपक्ष को दकियानूसी मानते हैं। मैं उन्हें चौधरी साहब का एक वक्तव्य याद दिलाना चाहूँगा। १९७४ के उत्तर

चाहे सत्ता में रहे हों या विपक्ष में देश का किसान चौधरी साहब का नाम सुनकर उनकी सभाओं में खिचा आता है ।

प्रदेश विधान सभा के चुनावों में कांग्रेस की तरफ से खुली बेईमानी देखकर चौधरी साहब ने कहा था कि यदि सत्तारूढ़ हर सही-गलत तरीके से सत्ता में बना रहना चाहता है तो जनता को भी यह हक हासिल है कि वह किसी भी तरीके से उसे सत्ता से हटा दे। असल में तो चौधरी साहब एक संयत सत्तापक्ष और जिम्मेदार विपक्ष के हामी हैं जहाँ दोनों खेल के कायदों को मानते हों। जनता पार्टी के अति क्रांतिकारी भी कुछ दिन बाद इन विचारों की उपयोगिता मानने लगेंगे, ऐसा आज के हालात देखकर लगता है। कोई भी विकासशील देश यदि जनतन्त्र के रास्ते चलना चाहता है तो वहाँ खुली अनुशासनहीनता और मनमर्जी के आचरण की छूट नहीं दी जा सकती। यदि कार्यप्रणाली

पर विचार करके कोई ऐसा रास्ता नहीं निकाला गया जहाँ व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और सामाजिक जिम्मेदारी में सन्तुलन न हो तो अन्ततः उन्हीं शक्तियों को लाभ होगा जो यह साबित करना चाहती हैं कि लोकतन्त्र अच्छी चीज नहीं है।

एक दल के निर्माण में चौधरी साहब की भूमिका को भी 'अंडर प्ले' किया गया है। एक दल बनाने और बाद में उसे बनाये रखने की कठिन प्रक्रिया में चौधरी चरण सिंह ने अपने हकों का जिस तरह त्याग किया वह बेमिसाल और अनुकरणीय है।

जनता पार्टी के सत्ता में आने के बाद दल के सामने सबसे बड़ी चुनौती थी देश को वैकल्पिक आर्थिक कार्यक्रम देना। कांग्रेस की नीतियों की आलोचना तो नुक्कड़ सभा वाला नेता भी कर सकता था मगर वैकल्पिक कार्यक्रम देना एक बड़ी बात थी। चौधरी चरण सिंह ने एक आर्थिक कार्यक्रम देश के सामने रखा जो जनता पार्टी का अधिकृत कार्यक्रम बन गया। मेरी दृष्टि में चौधरी चरण सिंह की यह महानतम उपलब्धि है। मगर इसपर खुश होकर रह जाने भर से काम चलने वाला नहीं है। यह आर्थिक कार्यक्रम यदि लागू किया जाता है तो बहुत शक्तिशाली वर्ग, धन्नासेठों, बड़े नौकरशाहों और भ्रष्ट राजनेताओं के भविष्य पर ताला पड़ जायेगा। इसलिये यह वर्ग चाहेगा कि यह कार्य-क्रम लागू न हो सके। यह वर्ग अच्छी से अच्छी बात को रास्ते में मार देने (किलिंग इन प्रोसीज्योर) के हुनर को बहुत अच्छी तरह जानता है। इसलिये क्रियान्वयन के स्तर पर बहुत ही सावधान रहने की जरूरत है। इसके लिये ग्रामशक्ति को संगठित और सचेत भी करना होगा।

कुछ लोगों का इल्जाम है कि चौधरी चरण सिंह, श्री नेहरू का बुत तोड़ रहे हैं। यह आधा सच है। पूरा सच यह है कि चौधरी चरण सिंह इन लोगों की आँख में तिनका डालकर बता रहे हैं कि देखो नेहरू का बुत टूटा हुआ है। नेहरू का बुत टूट गया था ६२ में। बाद में यह बुत

तोड़ा उन वास्तविकताओं ने जिन्होंने इस तथ्य को उघाड़ा कर दिया कि नेहरू के रास्ते तीस वर्ष चलकर भी आधी आबादी गरीबी की रेखा के नीचे रह गई। दिन को दिन कहने का गुनाह चौधरी चरण सिंह ने जरूर किया है।

चौधरी चरण सिंह की तर्ज नेहरू जी से अलग आज नहीं हुई है। नागपुर में सहकारी खेती का प्रस्ताव आया था।

नेहरू जी का समर्थन था उस प्रस्ताव को, चौधरी चरण सिंह ने जमकर विरोध किया था। राष्ट्रीय अखबारों ने लिखा था कि समझदारी की अकेली आवाज उत्तर प्रदेश के माल मंत्री की तरफ से आई थी। पूरे इरादे और भरोसे के साथ बोले थे चौधरी चरण सिंह और जबर्दस्त समर्थन किया था प्रतिनिधियों ने उनकी बात का। मगर नेहरू जी नेहरू जी थे उस जमाने में। प्रस्ताव को पास तो हो ही जाना था। यह दूसरी बात है कि सहकारी खेती का प्रस्ताव तो नागपुर में पास हो गया मगर सहकारी खेती चलने से पहले ही बैठ गई।

जनता पार्टी के एक पुरातात्विक महत्व के नेता ने झुँझलाहट में कहा है कि उत्तर प्रदेश में एक गांधी पैदा हो गया है। बात मजाक और खीज में कही गई लगती है। चौधरी चरण सिंह न गांधी हैं और न गांधी होने का दावा करते हैं। मगर गांधी की कमाई खाने वाले इस निरीह देश का कान पकड़ कर जिस गलत रास्ते पर लिये जा रहे थे चरण सिंह ने वहाँ से गांधी की तरफ मुड़ने की बात जरूर कही है और जनता पार्टी की आर्थिक नीति के प्रस्ताव के पास हो जाने के बाद तो यह कहा जा सकता है कि वे कामयाब भी हुए हैं।

चौधरी चरण सिंह नागपुर में नेहरू जी का विरोध अगर न करते तो आज उन्हें जहाँ बिठा कर जनता पार्टी के कुछ नेता इतरा भी रहे हैं और बेचैन भी हैं, उस गद्दी पर वे दस वर्ष पहले बैठ गये होते।

नागपुर का घाव गहरा था और वह कभी भरा नहीं। नागपुर से लौट कर तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष श्री ढेबरभाई ने उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री श्री सम्पूर्णानन्द जी को एक खत लिखा जिसमें कहा गया था कि चौधरी चरण सिंह से यह आश्वासन ले लिया जाय कि वे सहकारी खेती का अब आगे विरोध नहीं करेंगे। सम्पूर्णानन्द जी जो उस समय स्वयं चौधरी चरण सिंह से नाराज थे उन्हें भी यह बात अच्छी नहीं लगी। उन्होंने ढेबरभाई को जवाब में लिखा कि ए० आई० सी० सी० राष्ट्रीय नीतियों पर बहस करने और उन्हें निर्धारित करने का मंच है और वहाँ अपनी बात कह देने के बाद चरण सिंह एक निष्ठावान कांग्रेसी की तरह वहाँ पास प्रस्तावों के क्रियान्वयन के लिये काम करेंगे। उस मंच पर अपनी बात कहना सदस्यों का अधिकार ही नहीं बल्कि कर्त्तव्य है। चौधरी चरण सिंह को ढेबरभाई के खत की खबर मिली तो वे कांग्रेस के अन्दर के लोकतंत्र के प्रति शंकालु हो गये।

कुछ महीने बाद जब चौधरी चरण सिंह ने उत्तर प्रदेश में कांग्रेस नेतृत्व के नाकारा हो जाने के सिलसिले में जवाहर लाल जी को लिखा तो नेहरू जी ने उन्हें मंत्रिमंडल से इस्तीफा देने की सलाह दी। चौधरी साहब त्यागपत्र देने का फैसला कर ही चुके थे। उन्होंने ३ अप्रैल १९५९ को नेहरू जी को खत लिखा जिसमें अंत में लिखा था कि मुझको लगता है कि मैं कुछ मामलों पर खास विचार रखने के कारण नुकसान उठा रहा हूँ। उस पत्र के उत्तर में नेहरू जी ने जैसी की तैसी तो यह बात कबूल नहीं की मगर कुछ सच जरूर छलक कर बाहर आ गया :

"तुमने अपने खत के अंत में लिखा है कि मुझे यह लगता है कि मुझे कुछ मामलों पर खास विचार रखने के कारण नुकसान उठाना पड़ रहा है। मैं समझता हूँ तुम्हारा इशारा सहकारी खेती की तरफ है। मेरे विचार से मेरे निर्णय पर इस विशेष मामले का कोई प्रभाव नहीं है। मगर हो सकता है कि अचेतन रूप से इसका असर पड़ा हो।"

चौधरी चरण सिंह के सहयोगी चाहते थे कि वे इस्तीफा न दें। उनके बहुत विश्वस्त साथी और दैनिक 'विशाल भारत' के सम्पादक पण्डित श्रीराम शर्मा ने उन्हें लिखा कि कांग्रेस और योजना आयोग में कोई नहीं है जो खेती की बाबत जानता हो। आप त्यागपत्र न दें। मगर चौधरी साहब ने त्यागपत्र दे दिया। (अपने विचारों के लिये पिछले तीन दशकों में उन्होंने कम से कम आधा दर्जन बार मन्त्रिपद त्यागा है)।

बात यहीं खत्म नहीं हुई। चौधरी चरण सिंह द्वारा मंत्रिमण्डल से त्यागपत्र दे देने के बाद भी नेहरू जी के गुस्से से उन्हें छुटकारा नहीं मिल सका। जून १५, १९५९ को जवाहरलाल जी ने नैनीताल में कहा कि जो सहकारी खेती का विरोध करते हैं वे कांग्रेस छोड़ दें। हमें तादाद की जरूरत नहीं है। विशेषताओं वाले व्यक्तियों की जरूरत है। फिर २४ अक्तूबर, १९५९ को मेरठ में कार्यकर्ताओं की सभा में कहा कि जो लोग नागपुर प्रस्तावों को स्वीकार नहीं करते वे लोग कांग्रेस के नहीं हैं। और अधिक लाल पीले होते हुए उन्होंने कहा कि चरण सिंह की हिम्मत कैसे हुई कांग्रेस की नीतियों के खिलाफ खुल्लमखुल्ला प्रचार करने की। मैं उन्हें माकूल आदमी जानता था नामाकूल नहीं। लेकिन बड़े शर्म की बात है। और केवल वे ही लोग कांग्रेस में जिम्मेदारी का पद हासिल कर सकते हैं जो नागपुर प्रस्तावों का समर्थन करते हों।

चरण सिंह जी से जब मेरठ के कार्यकर्ताओं ने सारा वाक़या बताया तो उन्होंने सिर्फ इतना कहा पण्डित जी को ऐसा कहने का अधिकार नहीं है और न यह उन्हें शोभा देता है।

तो चरण सिंह नेहरूजी की कब्र या बुत पर पत्थर नहीं फेंक रहे हैं उन्होंने नीतियों की ठोस सरजमीन पर खड़े होकर जिन्दा और ताकतवर नेहरूजी को उनकी गलती बताई थी, विरोध किया था। वक्त ने चरण सिंह जी को सही साबित भी कर दिया था। इसीका नतीजा था कि

चरण सिंह उसके बाद कांग्रेस में अपना हक नहीं पा सके। जनता द्वारा जिनकी जमानत जब्त कर दी जाती थी वे तो मुख्य मन्त्री बने मगर चौधरी साहब नहीं। चौधरी साहब कांग्रेस के खेत में खरपतवार हो गये थे। और तभी फलफूल सके, जब अपनी अलग जमीन पर आकर खड़े हो गये।

बहुत बदनसीब हैं चौधरी साहब। राजनैतिक और नैतिक हैसियत इतनी कि बड़े बूढों को ईर्ष्या हो जाये। बरसों वर्ष कोशिश करके एक दल बनायें और जब नेता का प्रश्न आये तो शरमा कर मोरारजी के पास चुप बैठ जायें। सबसे ज्यादा एम० पी० पास थे मगर एक कागज के पुर्जे से प्रधान मन्त्री पद दे दिया मोरारजी को। मगर फिर भी कोई न कोई सियार चिल्ला ही देता है "कुर्सी चाहता हूँ"।

चौधरी चरण सिंह का कोई मोल नहीं है मगर इस खरीदफरोख्त के जमाने में यह बात किसे बर्दाश्त होगी। सारे बिकाऊ और सारे खरीददार उसे मिटाने पर तुले हैं। अभी वह हरिजनों का दुश्मन है। कल मुसलमानों का हो जायेगा और कुछ न होगा तो "जाट" तो है ही।

जहाँ चरण सिंह के लोग रहते हैं वहाँ न हरिजन बस्तियाँ कभी जली हैं न हरिजन कन्याओं के साथ बलात्कार हुआ है। साधारण झगड़ों को कहें तो हर कौम में आपस में भी हो जाते हैं। वहाँ हरिजन रहता है बस्ती के बीच। उसकी चौपाल बनवाते हैं सभी सवर्ण। उसकी लड़की का कन्यादान करता है किसान। बाबर से बहादुरशाह जफर तक इन इलाकों की सबसे बड़ी सोरों की सर्व ग्राम पञ्चायत के पाँच पंचों में एक हरिजन. एक वाल्मीकि और एक मुसलमान जरूर होता था। मैं उस क्षेत्र की बात कह रहा हूँ जिसने चरण सिंह को चौधरी चरण सिंह बनाया है।

चरण सिंह जहाँ से आता है वहाँ हिन्दू मुस्लिम दंगा नहीं होता। चरण सिंह मेरठ शहर, जबलपुर, अलीगढ़ और भिवन्डी का नहीं है।

वह तो विभिन्न नंगलों, पुरों, मड़ैयाओं, खुर्द और कलाँ का है और वहाँ के लोग जानते ही नहीं कि हिन्दू और मुसलमान को लड़ना क्यों चाहिये।

कहते हैं कि इन इलाकों में चरण सिंह को वोट न देने वालों से दुर्व्यवहार किया गया है। मैं इसकी सफाई में सिर्फ इतना कहूँगा कि लोग खुद वहाँ जाकर देखें। हाँ चरण सिंह को वोट देने वालों के साथ जो हुआ है वह भी देखें। सैकड़ों वर्गमील तक सिंचाई का एक मात्र साधन होने वाली नहरें महीनों रोकी गई हैं। और किसानों से कहा गया है कि चरण सिंह के पास जाओ। नौकरियाँ नहीं मिली हैं, अवनतियाँ हुई हैं, रिकार्ड खराब किये गये हैं। पिछले १० वर्ष चरण सिंह व उनके लोगों ने कैसे गुजारे हैं वे ही जानते हैं।

चरण सिंह हरिजन का दुश्मन हो ही नहीं सकता। चूँकि चरण सिंह और हरिजन मिलकर गाँव बनता है और गाँव मिलकर हिन्दुस्तान बनता है।

आखिर जेल में पड़े पड़े हमारे नेतागण कर क्या रहे हैं। दिक्कत यह थी कि जेल में केवल उन्हीं को मिलने की छूट थी जो निकट सम्बन्धी थे।

भारतीय लोकदल के कार्यकर्त्ताओं में भी ऐसी ही बेचैनी थी। ऐसे समय श्रीमती गायत्री देवी ने अपना कर्त्तव्यपथ निश्चित कर लिया। पार्टी संगठित रहे, कार्यकर्त्ताओं का मनोबल बना रहे, वे बाहर रहकर अपना कार्य करते रहें और नेताओं की सोच से अवगत रहें, इन सारे कार्यों को अकेले सम्पादित करने का उन्होंने बीड़ा उठा लिया।

वे जेल में चौधरी साहब से मिलती रहीं और गोपनीय ढङ्ग से सारी बातें कार्यकर्त्ताओं तक पहुँचाती रहीं। यह जोखिम से भरा कार्य था

वाराणसी के एक अत्यन्त सम्मानित परिवार में जन्मी कुमारी मंजुला उपाध्याय ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से पत्रकारिता का प्रशिक्षण प्राप्त कर मुक्त पत्रकार के रूप में अल्पकाल में ही पर्याप्त यश अर्जित किया है। उन्होंने देश के गृहमंत्री की सहधर्मिणी श्रीमती गायत्री देवी के व्यक्तित्व का बड़ी गहराई के साथ अध्ययन किया है और इस लेख में ऐसे तथ्यों को उजागर किया है जिनके संबन्ध में बहुत कम चर्चा हुई है। कुमारी मंजुला उपाध्याय लेखनी की धनी हैं और सहज तथा प्रवहशील भाषा में इन्होंने अपनी बात रक्खी है।

और उनकी गिरफ्तारी का भी खतरा था। मगर उन्हें इसकी परवाह कहाँ। खबर शासन तक पहुँच भी गई। उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा को ऊपर से निर्देश भी दिया गया कि गायत्री जी को गिरफ्तार किया जाय मगर सरकार की हिम्मत नहीं पड़ी।

एक बार तो अपने घर पर ही भारतीय लोकदल के कार्यकर्त्ताओं की बैठक बुलाने की स्वीकृति शासन से इन्होंने ली। आपात शासन द्वारा बैठक की स्वीकृति भी दे दी गई मगर दूसरी ओर यह चाल भी चली गई कि बैठक में भाग लेकर बाहर आते ही अनेक लोगों को

सामान्य लोगों से मिलना और उनके दुःखदर्द को सुनना श्रीमती गायत्री देवी की दिनचर्या है। ऐसे ही अवसर पर चौधरी साहब और श्री राजनारायण की मंत्रणा के बीच श्रीमती गायत्री देवी।

गिरफ्तार कर लिया जाय। पता नहीं क्यों इस बार भी माता जी पर क्यों कृपा की गई ? जबकि अनेक लोग गिरफ्तार किए भी गये।

चौधरी साहब की राजनीतिक धारा को मोड़ने वाले ऐतिहासिक फैसले की पृष्ठभूमि में भी श्रीमती गायत्री देवी की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। १९६७ में पहली अप्रैल को चौधरी साहब ने कांग्रेस का त्याग किया और इसके बाद भारतीय क्रान्तिदल की नींव पड़ी। लेकिन बहुत कम ही लोग जानते होंगे कि इस निर्णय की पृष्ठभूमि में एक अदृश्य शक्ति का हाथ था। कांग्रेस की कई घोषित नीतियों के प्रति विचारवैषम्य रखते हुए भी चौधरी चरण सिंह ने कांग्रेस पार्टी की सदस्यता नहीं छोड़ी थी। चाहे 'सहकारी खेती' का विषय हो, चाहे कांग्रेस द्वारा प्रचारित 'समाजवाद' के खोखले नारे का विरोध हो, इन विषयों पर इनकी तीव्र

प्रतिक्रिया सदैव सम्मुख आती रही। सन् १९५९ में नागपुर के अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन के मंच पर 'सहकारी खेती' पर दहाड़ने वाले कांग्रेसी सदस्य चौधरी साहब ही थे। मार्च १९६७ में उत्तर प्रदेश विधान-सभा के चुनाव में कांग्रेस की सरकार थोड़े से बहुमत से बन गई थी। श्री चन्द्रभानु गुप्त के नेतृत्व में सरकार बनी थी, चौधरी साहब शामिल नहीं हुए थे। दूसरी ओर विरोधी दल के विधायकों ने यह निश्चित किया कि चौधरी साहब के नेतृत्व में सरकार बनायी जाय। विधायकों के अनुरोध पर भी चौधरी साहब ने कांग्रेस से विलग होने में सहमति नहीं दी। ऐसी परिस्थिति में नाना जी देशमुख की प्रत्युत्पन्नमति का ही परिणाम था कि वे सीधे माता जी की शरण में गये और सम्पूर्ण रूप से माता जी को ही श्रेय जाता है कि उनकी प्रेरणा से चौधरी साहब ने निर्णायिक कदम उठाया।

अब जरा विधायक के रूप में उनके राजनीतिक जीवन का जायजा भी लिया जाय। आज के राजनीतिज्ञों के समान माताजी विधान-सभा में शोर-शराबा मचाने को ही राजनीति का एकमात्र कार्य नहीं मानतीं। विधानसभा सत्र के दौरान बहस में बढ़-चढ़ कर भाग लेने की अपेक्षा इन्हें ठोस कार्य में अधिक विश्वास है।

दो बार ये विधायक चुनी गयीं—सन् १९६९ में अलीगढ़ के इगलास क्षेत्र से और १९७४ में मथुरा से। कुर्सी से 'स्वविकास योजना' के बजाय इन्होंने क्षेत्र के विकास की ओर ध्यान दिया। इनके व्यक्तिगत प्रयास से अलीगढ़ एवं मथुरा जिले में कई विकास योजनाएं लागू हुईं। एकमात्र यही कारण था कि सन् ७७ के विधान सभा चुनाव में इनको टिकट देने की बहुत माँग थी। जीत निश्चित थी, परन्तु यहाँ उनका गृहिणी रूप राजनीतिज्ञ की अपेक्षा अधिक जागरूक हो गया। केन्द्रीय स्तर के प्रमुख नेता के रूप में चौधरी साहब पर अधिक जिम्मेदारी आ पड़ी थी। इस

स्थिति में विधायक से अधिक गृहिणी की जिम्मेदारी सम्भालना उचित समझ कर गायत्री देवी चुनाव-मैदान में नहीं उतरीं।

एक घटना का उल्लेख किये बिना गायत्री देवी के व्यक्तित्व का दूसरा पहलू अछूता ही रह जायेगा। चौधरी चरण सिंह के दबंग व्यक्तित्व के समक्ष अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व रखना भी दुष्कर है। परन्तु विचार की अभिव्यक्ति का भी अपना महत्त्व है। सन् १९७१ में चौधरी चरणसिंह के मुख्य मन्त्रित्व काल में, विधान-सभा में एक गैर सरकारी विधेयक पेश हुआ। विधेयक पेश करने वाले थे—जनसंघ के विधायक नित्यानन्द स्वामी। विधेयक था—'विधान-परिषद् को समाप्त कर दिया जाय।' मजेदार बात थी की चौधरी साहब विधेयक लाने के विरुद्ध थे परन्तु श्रीमती चौधरी ने चौधरी साहब के सम्मुख ही इस विधेयक के समर्थन में अपना मत दे दिया। यह घटना गायत्री देवी के निजी विचारों की द्योतक है।

मगर चौधरी साहब के दबंग व्यक्तित्व को वे पसन्द करती हैं। वे कहती हैं—"इनकी एक बात मुझे बहुत अच्छी लगती है, ये जो भी एकबार सही समझकर मन में ठान लेते हैं इस पर अड़ जाते हैं। फिर उससे नहीं हटते चाहे लाख कोई इनसे कहे। हालांकि लोग इसी कारण इन्हें जिद्दी भी कहते हैं पर मैं समझती हूँ कि जो सख्त नहीं होगा वह अच्छा शासक नहीं हो सकता।'

वे आज भी ढेर सारी महिलाओं और राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं से भेंट करती हैं। उनकी तकलीफों को सुनती और दूर करने का प्रयास करती हैं। दहेज आदि सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने की प्रेरणा देती हैं।

देश के वे सभी कार्यकर्त्ता जो उनसे मिलते हैं सभी श्रद्धापूर्वक उन्हें माताजी कहते हैं। इसलिये कि एक भारतीय गृहणी की भाँति सादे वेश में रहनेवाली और लोगों के सुख-दुःख में हिस्सा लेनेवाली ठेठ ग्रामीण

महिला की भाँति वे व्यवहार करती हैं और वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना में विश्वास करती हैं।

चौधरी साहब काम के बोझ से आज बेहद दबे हुए हैं और ऐसे समय उन्हें अधिकतम पारिवारिक सौख्य की आवश्यकता पड़ती है। माताजी को ऐसे समय अपने कर्त्तव्य और दायित्व का बोध है और वे तमाम व्यस्तताओं के बावजूद सद्गृहणी के दायित्व का निर्वाह करने के प्रति अति सजग हैं। इससे चौधरी साहब निश्चित रूप से दिमागी शान्ति अनुभव करते होंगे।

माता जी की विभिन्न क्षेत्रों में की जानेवाली सेवायें अनुपम हैं और भारत के एक योग्य, ईमानदार, कठोर और आदर्श प्रशासक की पत्नी के दायित्व का उन्होंने जो निर्वाह किया है वह भी अलौकिक है। कितनी महिलायें हैं जो इस कसौटी पर खरी उतरी हैं और कितनी महिलायें हैं जो प्रलोभनों से अडिग रही हैं।

कौन यह कल्पना करेगा कि कोई भ्रष्ट मंत्री, अधिकारी, राजनीतिक कार्यकर्त्ता चौधरी साहब के कोप से बचने के लिए माताजी को माध्यम बनाकर शरणागत न हुआ होगा और इसके लिए प्रलोभन न दिया होगा ? मगर एक भी ऐसा उदाहरण नहीं होगा जब माताजी ने किसी दोषी के लिये किसी प्रलोभन या दबाव में आकर चौधरी साहब को अपने पथ से विचलित करने के लिये प्रभावित किया हो।

निश्चित रूप से श्रीमती गायत्री देवी महिमामयी माताजी हैं।

•

शान्ता कुमार,
मुख्य मन्त्री, हिमांचल प्रदेश ।

जननेता चौधरी चरण सिंह

विशुद्ध गांधीवादी, आदर्शप्रिय एवं यथार्थवादी तथा प्रखर व्यक्तित्व की गरिमा से सम्पन्न चौधरी चरणसिंह गांधी जी की नीतियों एवं कार्य-क्रमों को मूर्त रूप देने के लिए दृढ़ संकल्प हैं। चौधरी साहब में कृषि-प्रधान भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न आयामों की बारीकियों को जाँचने परखने तथा उनका समाधान करने की एक बेजोड़ क्षमता है। वस्तुतः भारत की समृद्धि तथा सम्पन्नता के लिए कृषि को योजनाबद्ध विकास में उच्च प्राथमिकता देना श्री चरण सिंह की अविलम्ब मान्यता रही है।

किसान के परिवार में जन्मे चौधरी साहब ने अपनी वकालत की शिक्षा पूरी करके जब वकालत को अपना व्यवसाय बनाना चाहा तो उन्हें अपने व्यक्तित्व की गम्भीरता तथा वैचारिक शुद्धता का ऐसा आभास हुआ कि उन्होंने वकालत को गौण मानकर राजनीति में प्रवेश किया। राजनीति में प्रवेश करने के बाद उनके व्यक्तित्व में सही निखार आया। चौधरी साहब अपने सिद्धान्तों तथा मान्यताओं के लिए किसी भी मंच पर पीछे नहीं हटे। यहाँ तक कि नागपुर कांग्रेस अधिवेशन में कृषिसुधार प्रस्ताव में सहकारी कृषि को महत्ता देने के सवाल पर इन्होंने उसका डटकर विरोध किया ऐसे समय में जबकि वह उत्तर

प्रदेश सरकार में माल मन्त्री रहे। चौधरी साहब कृषि को गौण स्थान पाते भला कैसे सहन करते।

कृषक परिवार से सम्बन्धित होने के कारण इनके व्यक्तित्व में सादापन तथा शालीन गम्भीरता है जो उन्हें कृषकों की छोटी से छोटी कठिनाई से भी भलीभाँति अवगत रखती है। अर्थव्यवस्था में किसानों की अग्रणी भूमिका को वे बखूबी समझते हैं तथा उसे उसके इस अपेक्षित स्थान को सही तौर पर उपलब्ध करवाने के लिए किसी भी तरह का बलिदान देने से नहीं चूकते। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को उन्नत तथा विकसित करने तथा कृषक जीवन को उभारने में इनकी निष्ठा तथा संलग्नता सर्वमान्य है। भारतीय कृषक जीवन के उत्थान तथा सर्वोदय

हिमांचल प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री शान्ताकुमार अत्यन्त कुशल तथा ईमानदार प्रशासक ही नहीं हैं बल्कि जननेता भी हैं। उन्होंने चौधरी साहब के आर्थिक विचारों को इस लेख में इतनी कुशलता के साथ निरूपित किया है जैसे गागर में सागर। उनका यह कहना सही है कि सामाजिक बुराइयों को दूर करने में चौधरी साहब का व्यक्तित्व बेमिसाल काम करेगा।

हेतु चौधरी साहब कृषि में आमूल परिवर्तन लाने के पक्षधर हैं। इन परिवर्तनों को गाँधी जी की ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अनुरूप शान्तिप्रिय ढङ्ग से लाना चाहते हैं। वस्तुतः गाँधी जी ने भारत की उन्नति तथा समृद्धि इकाई के चहुँमुखी विकास को माना उसी तरह चौधरी साहब भारतीय अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन को दूर रहने का सही तथा अन्तिम उपाय ग्रामीण विकास को मानते हैं। उनका यह दृढ़ विश्वास है कि गाँधी जी द्वारा प्रतिपादित मान्यताओं के जरिये ही भारत सर्वसम्पन्न प्रगति करने में सक्षम है। यही नहीं उन्होंने गाँधी जी के विचारों को मूर्त रूप देने तथा नीतियों को कार्यान्वित करने का बराबर प्रयास किया।

देश में समतावादी आयोजित आर्थिक विकास के लिए चौधरी

साहब आर्थिक नीतियों को कृषि एवं ग्रामीण उन्मुख बनाना चाहते हैं। छोटे कुटीर तथा ग्रामीण उद्योगों की उपेक्षा करके बड़े उद्योगों की स्थापना भारत जैसे विशाल देश की रोजी तथा रोटी की समस्या हल करने में समर्थ नहीं। नई आर्थिक नीति के सन्दर्भ में वे कृषि तथा सम्बन्धित क्षेत्रों को उच्च प्राथमिकता दिलाने के लिए प्रयत्नशील हैं। उनकी मान्यता है कि कृषि तथा ग्रामीण क्षेत्र समन्वित विकास के जरिये भारत न केवल बेरोजगारों की ही भयानक समस्या हल कर सकता है बल्कि इस तरह के सन्तुलित विकास के माध्यम से देश में वांच्छित प्रगति हासिल की जा सकती है।

राजनीति में ईमानदारी तथा सादेपन को सुनिश्चित करने के लिए चौधरी साहब ने अपने व्यक्तिगत जीवन से मिसाल कायम की है। इनकी ईमानदारी तथा कर्तव्यनिष्ठा को विरोधी लोगों ने भी सराहा है। वे राजनीति तथा प्रशासन से भ्रष्टाचार मिटाने के लिए कटिबद्ध हैं तथा इस प्रयोजन के लिए एक मुहिम छेड़ रखी है। केन्द्रीय गृह मन्त्री होने के नाते श्री चरण सिंह प्रशासन में ईमानदारी तथा कर्तव्यपरायणता को सुनिश्चित करने के लिए कार्यवाही ऊपर से शुरू करने के पक्षधर हैं। लोकपाल बिल का संसद में पेश किया जाना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण काम है। वे भ्रष्ट व्यक्तियों के विरुद्ध शीघ्र तथा प्रभावशाली काररवाई करने के लिए चौकसी तत्व को सजग तथा जागरूक बनाने हेतु एकजुट प्रयास कर रहे हैं।

चौधरी साहब के अनुसार राजनीतिक भ्रष्टाचार निजी लाभ के लिए लोकहित का सौदा करना है। पिछली सरकार द्वारा भ्रष्टाचार को नजर-अंदाज कर उसे शह देने से यह संक्रामक रोग इस तरह से फैल गया है कि अन्ततः लोकतंत्र को भी खतरा पड़ गया है। इन्होंने भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष को यथेष्ट वरीयता देने के साथ ही राजनीतिकों, विशेष-कर सत्तारूढ़ दल से यह अपेक्षा रखी है कि वह व्यक्तिगत जीवन में पद-लोलुपता से दूर सादगी तथा ईमानदारी की मिसाल कायम करें ताकि निचले स्तर पर भी ईमानदारी सुनिश्चित की जा सके। दरअसल भ्रष्टाचार जैसे रोग को पूरी तरह से समाप्त करने के लिए इसकी जड़ पर चोट करनी होगी जिससे नीचे से ऊपर तक का यह सिलसिला ही खत्म हो सके। अगर ऊँचे स्तर पर व्यक्तिगत ईमानदारी नहीं है तो भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष उद्देश्यहीन ही रहेगा।

चौधरी साहब की लगन, निष्ठा एवं वैचारिक परिपक्वता तथा शुद्धता से जनता पार्टी के हम सब लोगों में एक नया विश्वास उत्पन्न हुआ है तथा लोगों में नई आशा जागृत हुई है। जनता सरकार के सत्ता में आने से लोगों की आकांक्षाएँ तथा आशाएँ बराबर बनी हुई हैं तथा जनता इस जनहित उन्मुख सरकार से ईमानदारी स्वच्छ तथा कुशल प्रशासन की अपेक्षा करती है। निस्सन्देह चौधरी साहब के मार्ग दर्शन तथा संकल्प से जनता पार्टी गांधी जी मार्ग को साकार करने में सक्षम हो सकती है।

श्री चरण सिंह राष्ट्रीय स्तर पर एक विशेष भूमिका निभा रहे हैं। ईमानदारी से किये गये प्रयत्नों का निष्कर्ष भी ठीक होगा। उनकी नीतियों द्वारा राष्ट्रीय जीवन में गरिमा आयेगी तथा देश का विकास भी द्रुत गति से चलेगा।

समाज में आये दोषों को दूर करने में भी इनका व्यक्तित्व एक बेमिसाल काम करेगा।

मोहन सिंह ओबेराय
संसदसदस्य

चौधरी चरण सिंह मेरी दृष्टि में

चौधरी चरण सिंह के व्यक्तित्व और कृतित्व की प्रशस्ति उनके अनेक मित्रों और प्रशंसकों ने की है। बहुतों ने उन्हें साधुवाद दिया है, उनके प्रति श्रद्धा तथा आदर के भाव प्रकट किये हैं। इसी क्रम में श्रद्धा सुमनों का यह हार मैं भी उनके प्रति अर्पित करना अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ।

भारतीय राजनीतिक परिदृश्य के कितने ही विवेकशील समीक्षकों ने चौधरी साहब की तुलना दिवंगत सरदार पटेल से की है। इसमें संदेह नहीं कि प्रशासनिक दृष्टि से चौधरी साहब की बुद्धि भी उतनी ही कुशाग्र है जितनी सरदार पटेल की थी। चौधरी साहब भी उतने ही अधिक ईमानदार हैं, अपने उद्देश्यों और लक्ष्यों के प्रति इनमें भी वही निष्ठा और दृढ़ता है तथा राजनैतिक और सामाजिक शक्तियों के पारस्परिक प्रभाव की इनकी पकड़ भी वैसी ही अचूक है जैसी सरदार पटेल की थी। केन्द्रीय गृह मंत्री के रूप में भी चौधरी साहब ने अपने को उस महान सरदार जैसा ही शक्ति-पुंज सिद्ध किया है जिसके ओज से शासन को बल मिला है, राजनीति और राजनेता के रूप में चौधरी साहब ने भी

शासन को वही गरिमा और मर्यादा प्रदान की है जो उसे स्वर्गीय सरदार के ज़माने में प्राप्त थी।

यह मेरा सौभाग्य है कि मित्र और राजनीतिक सहयोगी दोनों ही रूपों में चौधरी साहब को निकट से जानने का मुझे अवसर मिला है। भारतीय क्रांति दल में रह कर हमने लम्बी अवधि तक साथ-साथ काम किया है, वे संस्था के अध्यक्ष थे और मैं कोषाध्यक्ष। आगे चल कर हम जरूर अलग हुए, किन्तु इस राजनीतिक अलगाव से हमारी पारस्परिक मैत्री और घनिष्टता में कोई कमी नहीं आयी। हम जब राजनीतिक सहयोगी थे तब मेरे मन में उनके प्रति श्रद्धा और आदर का जो भाव

श्री मोहन सिंह ओबेराय न केवल अन्तराष्ट्रीय होटल समूह के मालिकों में ही हैं बल्कि भारतीय क्रांति दल के प्रमुख पद पर रहकर उन्होंने राजनीतिक दलों के संगठन और संचालन का भी अच्छा अनुभव प्राप्त किया है। अपने मूल अंग्रेजी में लिखित लेख (जिसका अनुवाद यहाँ दिया जा रहा है) में उन्होंने बड़ी ही मोहक भाषा में चौधरी साहब की नीतिज्ञता और प्रशासकीय गुणों का बखान किया है। चौधरी साहब के व्यक्तित्व पर इस लेख से अच्छा प्रकाश पड़ता है।

था वही आज भी है, और मेरा ख्याल है कि चौधरी साहब के हृदय में भी वैसे ही भाव आज भी विद्यमान हैं।

उत्तर प्रदेश मंत्रिमंडल में मंत्री और बाद में प्रदेश के मुख्य मंत्री और सम्प्रति केन्द्रीय गृह मंत्री के रूप में कुशल प्रशासक और दक्ष राजनेता की हैसियत से जो छाप चौधरी साहब ने छोड़ी है वह अमिट है। चाहे देश के सबसे बड़े राज्य में हो अथवा राष्ट्रीय रंगमंच पर। राजनीतिज्ञ और प्रशासक हर दृष्टि से चौधरी साहब का वैयक्तिक प्रभाव असंदिग्ध रूप से अनुभव किया गया है।

भारत जैसे विशाल देश की राजनीतिक और आर्थिक समस्याएं

किस प्रकार हल की जांय इस संबंध में चौधरी साहब की अपनी मौलिक, निश्चित और सुस्पष्ट विचारधारा है। देश के आर्थिक और राजनीतिक दोषों का परिग्रह करने के बारे में उनके उपाय अत्यन्त व्यावहारिक हैं। अपने विचारों के प्रति उनकी आस्था काफी दृढ़ है।

चौधरी साहब सच्चे और वास्तविक गांधीवादी हैं। उनके सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक हर दृष्टिकोण में गांधी जी के विचारों की झलक मिलती है। वे इस बात में दृढ़तापूर्वक विश्वास करते हैं कि भारत की अर्थव्यवस्था ग्रामोन्मुखी होनी चाहिये। ग्रामोद्योगों के वे प्रबल समर्थक हैं। उनका कहना है कि युगों से उपेक्षित कृषि का विकास और संवर्धन राज्यों को ऐसे आर्थिक साधन के रूप में करना चाहिये जिससे गाँवों में बसने वाली ८० प्रतिशत जनता का आर्थिक उद्धार हो सके क्योंकि जब तक समाज के इस विशाल समुदाय का अभ्युत्थान न होगा तब तक देश की वास्तविक समृद्धि हो ही नहीं सकती। उनका कहना है कि गृहउद्योगों को हर हालत में संरक्षण मिलना चाहिए तथा उनका इस प्रकार व्यापक विकास किया जाना चाहिए कि देश की अर्थ-व्यवस्था के विस्तार में इस विशाल समुदाय का भी योगदान हो सके।

इसी प्रकार चौधरी साहब की राजनीतिक मान्यताएँ भी स्पष्ट और परिभाष्य हैं। उनका कहना है कि केन्द्र को तो हर हालत में सुदृढ़ होना ही चाहिये किन्तु राज्यों को भी स्थानीय और राज्यस्तरीय मामले

निपटाने के लिए पर्याप्त छूट मिलनी चाहिए। प्रशासन के हर स्तर पर भ्रष्टाचार जड़ से दूर करने के वे कट्टर हिमायती हैं। चौधरी साहब की यह दृढ़ मान्यता है कि सम्प्रभुता जनता के हाथ में ही रहनी चाहिए। सरकारें चाहे राज्यों की हों या केन्द्र की जनता की सेवक हैं और उन्हें जन हित को सामने रख कर ही कोई काम करना चाहिए।

एक शब्द में कहें तो कह सकते हैं कि चौधरी साहब की बड़ी गहरी आस्था लोकतंत्र, लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं और लोकतांत्रिक प्रतिमानों के प्रति है।

उनकी दीर्घ आयु की कामना करते हुए मैं उनके वर्तमान और भविष्य के प्रति मंगलकामनाएं समर्पित करता हूँ।

•

शिवदेव नारायण राय

वे राजनीति को व्यवसाय नहीं धर्म मानते हैं

चौधरी चरण सिंह की सीधी, साफ और तीखी बात हमारे इन्दिरा-वादी पत्रकारों को अच्छी न लगती हो, उनकी गाँव की जबान में ग्रामोन्मुख अर्थनीति की बात समाचारपत्रों की सुर्खियाँ न बन पाती हों, लेकिन इतना तो सच है ही कि आज हिन्दुस्तान के गृहमंत्री जैसे महत्व के पद पर रहने के बाद राजधानी की राजनीतिक बस्ती में स्थित रेसकोर्स रोड का पाँच नम्बर बंगला ही एकमात्र ऐसा मकान है जहाँ देश और विदेश के पूँजीपतियों और उनके दलालों की लम्बी कारें प्रवेश नहीं पा सकी हैं।

समाजवादी नेता और विचारक डा० राममनोहर लोहिया ने कहा था, "लोग मेरी बात सुनेंगे, शायद मेरे मरने के बाद। लेकिन किसी दिन सुनेंगे जरूर। आज नए नेतृत्व और लोगों में कई खूबियों की जरूरत है। बहुत आराधना हो चुकी। फूल चढ़ाना और यशोगान भी हो चुका। नेता रहेंगे, अनेक नेता रहेंगे। नेतृत्व भी रहेगा—वह असली नेता लोगों पर अधिक जादू कर सकेगा। लेकिन नया नेतृत्व और नए लोग राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय स्तर के नहीं, गाँव के स्तर के होंगे।"

आज जब डा० राममनोहर लोहिया के सपने साकार हुए हैं, उनकी गैरकांग्रेसवाद की नीति और दर्शन समय की कसौटी पर खरे उतरे हैं,

और देश से अंग्रेजों की विरासत के कांग्रेसी राज का खात्मा हुआ है, तथा इस बात की सम्भावनाएँ बढ़ी हैं कि देश की सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन कर उसे इस लायक बनाया जा सके कि भारत की अस्सी प्रतिशत से भी अधिक उस आबादी को, जो धरती से अन्न पैदा करके सारे राष्ट्र को भोजन देती है, उसके परिश्रम का उचित मूल्य दिलाया जा सके, तो यह लाजिमी हो जाता है कि किसानों की बात कहने और समझने वाले नेता और नेताओं का ध्यान कृषि और उस पर आधारित अर्थ-व्यवस्था की ओर जाय। आजादी के तीस सालों के बाद यह अवसर आया है जब गाँव के किसान की चर्चा राजधानी में हो रही है। किसानों

छात्र-जीवन से ही प्रखर और आक्रामक व्यक्तित्व वाले श्री शिवदेव नारायण ने देश की सक्रिय राजनीति में कदम रखने से पूर्व ही पत्रकारिता को पेशे के रूप में स्वीकार किया। अल्प काल में ही 'जनवार्ता' तथा 'नार्दर्न इंडिया पत्रिका' जैसे दैनिक पत्रों से अनुभव प्राप्तकर अब 'जन' हिन्दी साप्ताहिक के सहायक सम्पादक हैं। श्री शिवदेव नारायण ने बड़े जोरदार और तार्किक ढंग से उन लोगों का मुँहतोड़ उत्तर दिया है जो अपने निहित स्वार्थों के कारण चौधरी चरण सिंह के अनायास ही दुश्मन बने बैठे हैं।

की बात किसानों की ही भाषा में कहने वाला जो नेता स्व० डा० राममनोहर लोहिया की परिभाषा में सटीक बैठता है उसका नाम है, चौधरी चरण सिंह। इस महान व्यक्ति को आज देश में ही नहीं, विश्व की आर्थिक दुनिया में काफी सतर्कता और गम्भीरता के साथ देखा जा रहा है।

डा० लोहिया का ऐसा विचार था कि समाज के पिछड़े, दबे तथा शोषित तबके के लोगों को समान अवसर के सिद्धान्त के आधार पर आगे बढ़ाना तो दूर, उन्हें उनके वांछित हक दिलाने में भी हम सफल नहीं हो सकते हैं। उनकी स्पष्ट सोच थी कि समाज के इन लोगों की नौकरी, राजनीति तथा अन्य सभी क्षेत्रों में प्रारम्भ में साठ प्रतिशत या

यदि जरूरत पड़े तो अस्सी प्रतिशत तक स्थान देकर समाज के अन्य वर्गों के मुकाबले में लाया जाना चाहिए। अफसोस इस बात का है कि लाख चाहने के बावजूद और निरन्तर प्रयास करते रहने के बावजूद इन वर्गों के लोग या तो उनके दर्शन को समझ नहीं सके थे या अन्य किसी कारण से दूर रहे। परिणाम यह हुआ कि डा० लोहिया जिस समूह की राजनीति करना चाहते थ वह उनसे लगातार कटा-कटा सा रहा, यद्यपि उनके अनुयायी, विशेष रूप से श्री राजनारायण और स्व० रामसेवक यादव, लगातार इस बात के लिए प्रयास करते रहे कि समाज के इस पिछड़े वर्ग को डा० लोहिया के दल और दर्शन के नजदोक लाया जा सके। इसी संदर्भ में देश के सौभाग्य की ही बात होगी की चौधरी चरण सिंह के साथ यह तबका अपने आप जुटता गया जो १९७७ में सत्ता परिवर्तन का कारण बना। यथास्थितिवादी तत्वों को यह बात अब नागवार लग रही है और वे उसके विरुद्ध तरह-तरह के भोंडे बयानों के जरिए अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर और इन वर्गों के विरुद्ध क्रियाकलापों के जरिए वशिष्ठी ब्राह्मणवाद की राजनीति देश में फिर पनपाना चाहते हैं। आज चौधरी चरण सिंह जी की ग्रामीण अर्थनीति का मजाक बनाने वालों में जो चेहरे सामने आते हैं या उनकी लघु उद्योग की नीति की जो लोग आलोचना करते हैं, उनमें वे चेहरे आसानी से देखे जा सकते हैं, जो डा० लोहिया के जीवनकाल में उन्हें पागल कहा करते थे।

देश के धनपति और परम्परावादी राजभक्त विशेषरूप से नेहरू परिवार के चाटुकार अब कैसे बर्दाश्त कर सकते हैं कि उनके प्रतिनिधि

श्री कृष्णकुमार बिड़ला को तथा उन्हीं के द्वारा पाले-पोसे गए परिवार के प्रतीक को जेल भेजा जाय। चरण सिंह पहले गृह मंत्री हैं, जिनके कार्यकाल में बिड़ला परिवार पर हाथ पड़ा है और श्री के० के० बिड़ला की गिरफ्तारी के वारण्ट जारी हुए हैं। उत्तर प्रदेश में उनके हिण्डालको कारखाने की बिजली काटी गयी है। चौ० चरण सिंह जी तथा उनके समर्थक मुख्य मंत्री का यह कहना है कि किसानों और लघु उद्योगों को देने के बाद यदि बिजली बचती है तभी वह बड़े पूँजीपति के बड़े कारखाने को दी जा सकती है। नेहरू मिथक और उनकी राष्ट्रघातो बड़े उद्योग की नीति पर इससे बड़ा प्रहार आजादी के तीस वर्षों के मध्य आज तक कभी नहीं हुआ था। इससे पहले के मुख्य मंत्रियों के समय अपने कारखाने को बिजली दिलाते रहने और उसका बकाया पैसा भी न देने के मामले सलटाने के लिए बिड़ला की जरूरत नहीं पड़ती थी उसका नौकर या बाद के दिनों में नौकर का प्रतिनिधि ही काफी होता था। अनेक बार ऐसे मामले भी प्रकाश में आए जब सरकार अदालत से मुकदमा जीतने की स्थिति में आती थी तब मुख्य मंत्रियों की ओर से पैसा न वसूलने के समझौते कर दिए जाते थे, और आज तक करोड़ों रुपये बकाए के चढ़ते चले गए। इन जनहित-विरोधी समझौतों-जिनमें राजकीय कोष की भारी क्षति हुई, का राज क्या था ? यह समझौता करने वाले ही जानें। अब चौधरी चरण सिंह की जब तक चलेगी तब तक ऐसे समझौते नहीं हो सकेंगे।

आज चौधरी चरण सिंह जी का विरोध करने के लिए उनके विरोधियों ने एक नया फार्मूला अख्तियार किया है। वे सीधे न तो जनता पार्टी की अर्थनीति पर हमला करते हैं और न तो चौधरी चरण सिंह जी के कृषि सम्बन्धी विचारों पर। वे पण्डित जवाहर लाल नेहरू की नीतियों की तारीफ करके उल्टे तरीके से नई अर्थनीति पर हमला करना चाहते हैं, यह भी उनके इन अपवित्र प्रयासों का ही फल है कि

आज देश में जो राजनैतिक ध्रुवीकरण या समीकरण बन रहा है, उसमें सीधे-सीधे दो खेमें बने हैं, एक चौधरी साहब के समर्थकों का और दूसरा उनके विरोधियों का। दूसरा समूह सीधी तौर पर सिर्फ नकारात्मक आधारों पर टिकने का प्रयास कर रहा है जब कि पहले समूह के पास विचारों और नीतियों के ठोस आधार हैं। नेहरू-भक्ति का आज भी दावा करने वाले लोग यह भूल जाते हैं कि देश का जनमानस आज पूरी तौर पर पं० नेहरू और उनकी नीतियों को अस्वीकार कर चुका है, और जो लोग चरण सिंह जी की आलोचना के लिए नेहरू जी की नीतियों की वकालत का रास्ता अख्तियार करते हैं वे खामखाह में अपने विरोधियों की संख्या बढ़ाकर चौधरी साहब को मजबूत ही करते हैं। लोगों को यह मालूम हो चुका है कि देश की अर्थव्यवस्था और नियोजन को रसातल के गर्त में ले जाने के लिए एकमात्र उत्तरदायी पं० जवाहर लाल नेहरू तथा उनकी नीतियाँ रही हैं। उनके शासनकाल के दौरान किसानों और गाँवों की नहीं अमरीकी और रूसी स्टाइल के विकास कार्यों की चर्चा होती थी, आज परिस्थितियाँ बदली हैं और राजधानी में किसानों की चर्चा हो रही है, हरिजनों और पिछड़ी जातियों का द्विजों और शोषक पूँजीपति वर्ग द्वारा शोषण कम हुआ है। इसका एकमात्र कारण यह है कि राजधानी में किसानों की आवाज उठाने वाले लोग पं० नेहरू की तरह पूँजीपतियों की थैली और जेम्स बाण्डी हरकतों के जरिए नहीं अपितु ठोस किसान और ग्रामीण पृष्ठभूमि से आए हुए लोग हैं। इनमें चौधरी चरण सिंह जैसे लोग इस "किसान पूजा" (किसान कल्ट) के हिमायती और पोषक हैं।

चौधरी चरण सिंह और उनके जैसे लोग राजनीति को व्यवसाय नहीं, डा० लोहिया की तरह धर्म मानते हैं। और सत्ता प्रतिष्ठान के केन्द्रों को मन्दिर की तरह पवित्र मानकर सरकारी काम-काज तथा राजनीतिक दाँवपेच को पूजा समझते हैं। अपने काम को गम्भीरता

और तल्लीनता से करते हैं। प्रशासनिक सूझबूझ और क्षमता का तो कहना ही क्या। वे अपने विभाग की सारी फाइलें खुद पढ़ते हैं तथा काफी मनन और अध्ययन के बाद ही किसी नोट या आदेश पर दस्तखत करते हैं। वे अपने विभाग की नौकरशाही पर पूरी तौर से हावी रहते हैं। क्या मजाल कि कोई भी अफसर किसी गलत नोट पर चौधरी साहब से हस्ताक्षर करा ले जाय। लाल पेन्सिल लग ही जाती है। चौधरी साहब की अक्खड़ता, तल्लीनता, कठोरता, उत्कृष्ट प्रशासनिक क्षमता और अन्तर्मन की सहृदयता ही उनके ऐसे सद्गुण हैं, जिन पर देश का तीन चौथाई से भी अधिक हिस्सा मोहित है। यह भाग है हरिजनों का, पिछड़ी जातियों का, तथा भारत के भाग्यविधाता किसानों का।

जहाँ तक प्रशासनिक अधिकारियों का सवाल है, चौधरी साहब उन पर जहाँ कड़ाई करते हैं वहीं उन्हें स्नेह और प्यार भी देते हैं, जिसका परिणाम होता है प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा उनका विश्वासपात्र बनना। चौधरी साहब प्रशासनिक अधिकारियों को अपना विश्वास देकर उनका विश्वास प्राप्त करते हैं जो उनके विभाग को निपुणता के साथ चलाने में मददगार होता है। चौधरी साहब अनावश्यक लफ्फाजी के समर्थक नहीं हैं।

जो काम वे खुद न कर सकते हों उसके लिए वे विरोधी दल में रहने पर भी अनावश्यक माँग नहीं किया करते थे। आज भी संसद में उनका यही दृष्टिकोण रहता है कि जो बातें की न जा सकती हों उनकी अनावश्यक माँग नहीं की जानी चाहिए। वे सिर्फ प्रचार के लिए ही बातें करने के समर्थक नहीं हैं। समाचार पत्रों के पीछे जहाँ आज का राजनैतिक जीव भागता फिरता है वहीं चौधरी साहब यदि उनके खिलाफ भी कुछ छपता है तो उस पर कुपित होने के बजाय उपेक्षित कर जाना ही उचित समझते हैं।

देश के समाचार पत्रों और पत्रकारों के एक अभिजात्य समूह द्वारा किए जा रहे संगठित प्रचार के शिकार चौधरी चरण सिंह जी भी हैं जिनको हमेशा गलत ढंग से परिभाषित करने का प्रयास किया गया है, परिणामस्वरूप आज देश में उन्हें ठीक ढंग से समझा नहीं जा रहा है। देश में यथास्थितिवादी ताकतें अपने विभिन्न प्रयासों के जरिए आज भी इस बात में लगी हुई हैं कि चौधरी चरण सिंह जी और उनके समर्थक तत्वों को निरन्तर कमजोर करते रहा जाय। नेहरू और उनके खान-दान समर्थक तत्व तथा भारतीय प्रशासनिक सेवा में उनके शुभचिन्तकों का समूह हमेशा किसी न किसी प्रकार चौधरी साहब को नीचा दिखाने का प्रयास करता रहता है, प्रबल जनसमर्थन होने के कारण चौधरी साहब का वे कुछ बिगाड़ तो नहीं कर रहें हैं, लेकिन अपने प्रचारों से वे भ्रामक माहौल बनाने में सफल हो रहे हैं। इसमें चौधरी साहब की भी कुछ न कुछ जिम्मेदारी आ ही जाती है। वे मित्र तो क्या बना पाते हैं, लेकिन शत्रु बनाते उन्हें देर नहीं लगती। साफगोई से कही गयी उनकी बात लोगों को तुरन्त नागवार लग जाती है। लेकिन जो चौधरी साहब के निकट आता है, वह इतना ज्यादा निकट हो जाता है कि उसे दूर करने के भी लोगों के प्रयास बेकार ही सिद्ध होते हैं। यह उनकी सहृ-दयता और भाईचारे की भावना का परिचायक भी है। लेकिन इसी का फायदा उठाकर कुछ ऐसे तत्व जिन्हें उनकी निकटता प्राप्त हो जाती है, दूसरों को दूर रखने या उनके खिलाफ चौधरी साहब को गुमराह करने या उनके कान भरने का काम करते रहते हैं। उनकी सहजता भी कम नहीं। थोड़ी सी मीठी बात करके एक से एक गलत लोगों ने भी उनसे अपना काम निकाल लिया, बड़े-बड़े राजनीतिक महत्व के पद प्राप्त कर लिए, लेकिन जब चौधरी साहब को पता चला तो वे सिर्फ़ नाराज ही नहीं हुए हमेशा के लिए अपना दरवाजा उन लोगों के लिए बन्द करा दिया, चाहे वे जितने भी नजदीकी क्यों न रहें हों।

जहाँ तक पिछड़े वर्गों की राजनीति का सवाल है, उसमें तो चौधरी साहब किस्मत के धनी हैं। जिन वर्गों को अपने साथ लाने के लिए डा० राममनोहर लोहिया जैसा व्यक्ति जीवन भर प्रयास करने के बावजूद असफल ही रहा हो, उसे चौधरी साहब ने बिना प्रयास के अपने साथ जिस तूफानी गति से मोड़ा, उसी का परिणाम रहा कि श्री राजनारायण की चुनाव याचिका के फैसले और लोकनायक जयप्रकाश के आन्दोलन को जब चुनाव के अवसर पर जनता पार्टी के लिए वोट माँगने की आवश्यकता पड़ी तो चरण सिंह समर्थक तत्व और समूह जिस तेजी के साथ निकले उसका कोई जोड़ सारे देश में नहीं मिला। मुजफ्फरनगर जैसे जिले से मुसलमान को चौधरी साहब ने संसद के लिए जितवा दिया। इन्हीं पिछड़े वर्गों की आशाओं और आकांक्षाओं का भारत बनाने के लिए प्रयत्नशील चौधरी चरण सिंह जी ने नयी दिल्ली के एक समारोह में कहा था कि "यदि आज डा० लोहिया जिन्दा होते तो मैं राजनारायण और मधुलिमए से भी ज्यादा उनका नजदीकी होता।" (इस समारोह में श्री राजनारायण तथा श्री मधुलिमए दोनों उपस्थित थे।)

चौधरी साहब की उपरोक्त बात में काफी वजनदार तर्क इसलिए हैं कि वे बहुत सारी बातों में डा० लोहिया के नजदीक बैठते हैं। वे उन्हीं की तरह अपनी बात पर अड़ने वाले हैं चाहे इसके लिए उन्हें अपने प्रिय से प्रिय जन का भी विछोह क्यों न बर्दाश्त करना पड़े। इतना ही नहीं वे इसके लिए बड़े से बड़े आदमी से भी टकराव लेने और जोखिम उठाने के लिए तैयार रहते हैं। अवसर आने पर उन्होंने ऐसा करके दिखाया भी है। चौधरी साहब अपने निर्णयों के प्रति छुई-मुई नहीं हैं। वे अधिक अन्तर्द्वन्दों के बीच काम करना पसन्द नहीं करते, न ज्यादा जालबट्टा ही उन्हें पसन्द है। साफ फैसले करना और उन पर अमल करना उनकी आदत है। वे कथनी और करनी की एकता में विश्वास करते हैं। ●

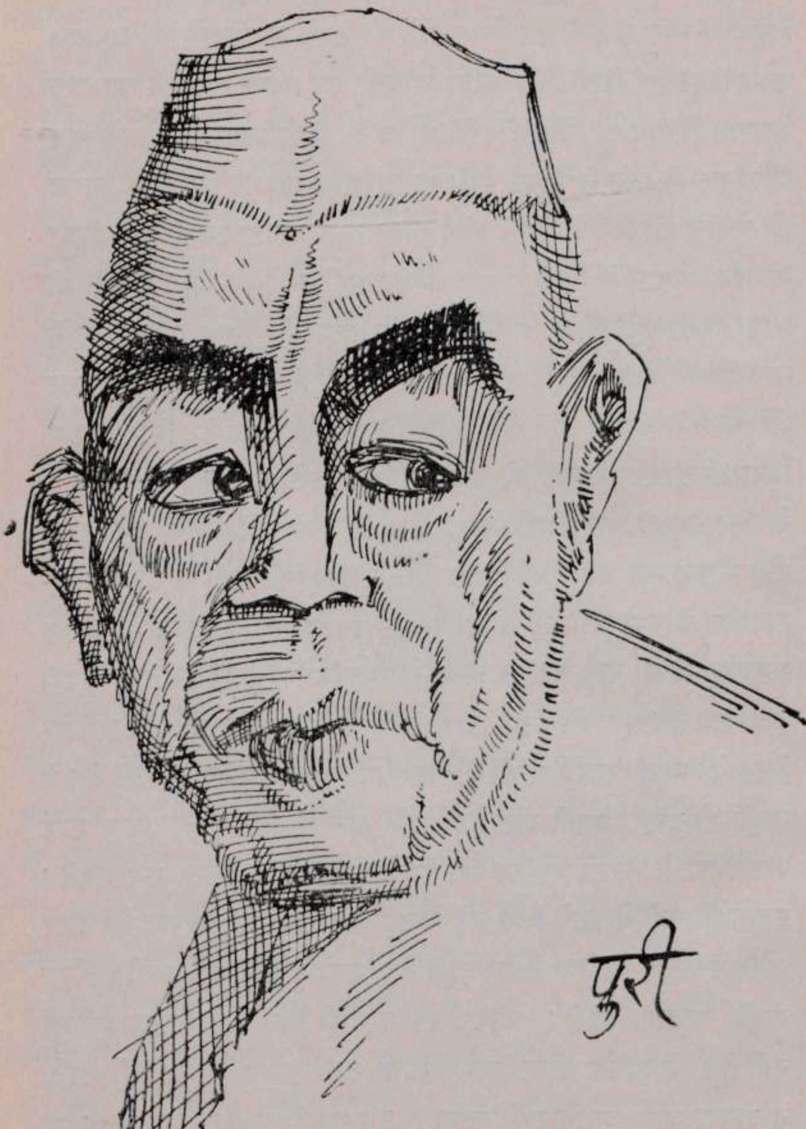
पुरी

राजेन्द्र पुरी

चौधरी चरण सिंह का महत्व

कोई भी व्यक्ति जिसने अपने जीवन का सबसे मुख्य काम और समाज के लिए सबसे महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक काम अभी करना है, उसकी बहुत तारीफ नहीं करनी चाहिए। ऐसा करना हमारे रस्म रिवाज के खिलाफ है। ऐसा करने से लोग मानते हैं कि उस व्यक्ति पर नजर लग सकती है। हम किसी पर नजर नहीं लगाना चाहते और न ही किसी की बहुत तारीफ करना चाहते हैं। परन्तु आज की राजनैतिक स्थिति को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम इस बात को स्पष्ट करें कि चौधरी चरण सिंह का महत्व क्या और क्यों है ?

इतिहास का खेल व्यक्तियों से नहीं, शक्तियों से खेला जाता है। सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक शक्तियों के आपसी मतभेद के आधार पर ही ऐतिहासिक दिशा तय होती है। मगर कभी-कभी एक ऐसा निराला व्यक्ति राजनैतिक मंच पर आ जाता है, जो कि घटनाओं के कारण या अपने कर्मो के कारण या अपनी किस्मत के कारण अपना सारा जीवन एक ऐसे आदर्श या उसूल या नीति से लपेट लेता है कि उसके बाद उसका अनुमान व्यक्तित्व के आधार पर नहीं किया जा सकता। ऐसी स्थिति में वह व्यक्ति एक शक्ति बन जाता है।

और उस व्यक्ति के शक्ति बनने के लिए यह काफी नहीं कि वह केवल एक बड़ी नीति से पूर्ण तौर पर सहमत रहे। यह भी आवश्यक है

कि व्यक्ति और नीति का मेल सही समय पर हो, जब कि समाज एक नयी दिशा स्वीकार करने के लिए तैयार हो। तो जब व्यक्ति, नीति और समय का एक सही संगम बैठता है, केवल तब ही एक नई राजनैतिक शक्ति का परिचय ऐतिहासिक मंच पर होता है।

भारत के पिछले पचास साल के इतिहास में ऐसे कुछ व्यक्ति रहे हैं, जिन्होंने एक मुख्य उसूल या नीति को उठाकर अपने व्यक्तित्व में शक्ति का रूप पकड़ लिया हो। उनमें सबसे महान महात्मा गान्धी थे, जिनका जीवन उन्होंने देश को आजाद करने के लिए त्याग दिया था। जवाहर लाल नेहरू देश को नवीन बनाना चाहते थे। सरदार पटेल राष्ट्र की

प्रसिद्ध व्यंग चित्रकार और पत्रकार श्री राजेन्द्रपुरी आपातस्थिति में जुल्मों से जूझने वालों में प्रमुख रहे हैं। अनेक प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं से सम्बद्ध रहने के बाद आजकल बम्बई से प्रकाशित ब्लिटज् तथा इलस्ट्रटेड वीकली आफ इण्डिया में प्रमुख स्तम्भकार के रूप में सम्बद्ध हैं। देश के सभी प्रमुख समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं में उनके व्यंग चित्र तथा लेख प्रकाशित होते रहते हैं। जनता पार्टी के गठन के बाद उसके प्रचार सचिव के रूप में उन्होंने लोकसभा के ऐतिहासिक चुनावों के समय प्रमुख भूमिका निभाई थी। प्रस्तुत लेख में उन्होंने चौधरी साहब के महत्व पर प्रकाश डाला है।

एकता को मजबूत बनाना चाहते थे। डा० लोहिया और जयप्रकाश नारायण देश की गरीब जनता में लोकतान्त्रिक अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्ष की भावना पैदा करना चाहते थे। इस तरह विभिन्न व्यक्तियों ने विभिन्न सामाजिक पहलुओं को पकड़कर अपने व्यक्तित्व में शक्ति का रूप धर लिया था। ऐसे व्यक्तियों का प्रभाव इतिहास पर कभी तो उनके जीवन में और कभी उनके जीवन के बाद होता है। मगर हर व्यक्ति जो एक ऐसी शक्ति बन जाता है वह अपना निशान इतिहास के पन्नों पर जरूर छोड़ जाता है।

आज इस बात की सम्भावना है कि चौधरी चरण सिंह एक ऐसी राजनैतिक शक्ति बनकर समाज को एक नयी दिशा पर खींच लेगें। समय

तो सही है क्योंकि तीस साल की 'टिक-टिकाई' के बाद सारा देश एक नई दिशा के लिए प्यासा है। व्यक्ति भी सही है, क्योंकि चौधरी चरण सिंह का तमाम दृष्टिकोण एक ही बुनियादी नीति पर आधारित है, जिसको सफल बनाने के लिए उन्होंने अपना सारा राजनैतिक जीवन बाजी पर लगा दिया है, और वह बुनियादी नीति भी सही है क्योंकि जब तक हम उसको सफल नहीं बनाते हमारे देश का कल्याण कभी नहीं हो सकता।

वह नीति और दृष्टिकोण क्या है जिनको चौधरी साहब ने अपनी राजनैतिक बुनियाद बना लिया है ? सिर्फ यही कि देश का भविष्य देहात के कल्याण पर निर्भर है। जब तक देहात तरक्की नहीं करता, देश कभी मजबूत और स्थिर नहीं बन सकता। शहर और गाँव का टकराव कोई वर्ग संघर्ष के बराबर नहीं है। लगभग अस्सी प्रतिशत हमारे देश की जनसंख्या देहात में रहती है, आज वह अस्सी प्रतिशत आबादी दबी हुई है। बड़े-बड़े शहरों की ऐय्यासी की खातिर देहात का खून चूसा जा रहा है, और यह भी है कि बड़े शहरों का हाकिम तबका विदेशी विचारधाराओं और विदेशी संस्कृति से प्रभावित हाकिम तबके को विदेशी शक्तियों से शह और समर्थन मिलता है। देश का कल्याण तभी हो सकता है जबकि देहात इस हाकिम तबके की नीतियों की पकड़ से मुक्त हो सकेगा।

चौधरी चरण सिंह एक ऐसी शक्ति हैं, जो कि देहात और देश के ऐसी मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं, यही उनका महत्व है। वे सफल तभी बन सकेगें, अगर उनकी शक्ति और बढ़ेगी। और अगर उनकी व्यक्तिगत दृढ़ता को देश की सारी जनता का पूर्ण सहयोग मिलेगा। केवल तब हमारा देश हकीकत तौर पर विदेशी विचारधाराओं और सांस्कृतिक गुलामी से बचकर आजाद बन सकेगा। केवल तभी देश की अपनी रूह जागरूक बन सकेगी, और समाज के सब वर्ग सुख से रह सकेंगे। ●

धर्मशील चतुर्वेदी
एम० ए०, एल-एल० बी०, बी० एड०, पी० डिप०

न दायें न बायें

भारत की आर्थिक नीति :

गान्धीवादी रुपरेखा

पक्ष–प्रतिपक्ष और उत्तरपक्ष

समस्या को सही पहचान हो जाय तो रास्ता साफ और निरापद हो जाता है। मगर दिक्कत यही है कि कम ही लोग ऐसे होते हैं जो समस्या की गहराई में जाना चाहते हैं। वे लोग जो शासन में किसी पद पर होते हैं उनके पास इतना अवकाश ही नहीं होता कि वे किसी गम्भीर विषय विशेषकर अर्थनीति पर सोच और लिख सकें। सच तो यह है कि जो लोग समस्या के साथ जीते हैं वे संभव है उसके सही कारण को ढूँढ भी लें मगर जो नहीं जीते वे जीवन भर समस्या को समझ ही नहीं पाते और अवसर तथा पद प्राप्त होने पर वे समस्या को समाप्त

करने को ओर जल्दीबाजी में जुट जाते हैं। नतीजा यह होता है कि समस्या जहां की तहां धरी रह जाती है और हड़बड़ी में जो रास्ते चुने जाते हैं उनसे उत्पन्न नयी समस्या मूल समस्या के साथ अलग और जुट जाती है। देश के आर्थिक उपक्रम के साथ भी शायद कुछ ऐसी ही दर्दनाक कहानी जुटी है।

चौधरी चरण सिंह राष्ट्रीय स्वतंत्रता के बाद स्व० जवाहर लाल नेहरू की आर्थिक नीतियों की इसी आधार पर समीक्षा करते रहे हैं। इसलिए कि स्व० नेहरू द्वारा समस्या को सही ढंग से पहचाना नहीं गया मगर जल्दीबाजी में उनको हल करने का एक ऐसा रास्ता चुन लिया गया, जिससे नयी समस्याएँ पुरानी समस्याओं के साथ और जुड़ गईं। अतः भारत की तरक्की के लिए अब जो रास्ता चुना जाय उससे पूर्व जरूरी यह है कि देश की आर्थिक समस्याओं को पहले गहराई और पूरी ईमानदारी के साथ समझा जाय।

चौधरी चरण सिंह की हाल ही में प्रकाशित पुस्तक "इंडियाज इकॉनौमिक पौलिसी' द गान्धियन ब्लूप्रिंट" के प्रकाश में उनकी आर्थिक नीतियों को समझने का प्रयास हमारा प्रतिपाद्य है। इस गांधीवादी रूपरेखा पर विचार करने से पूर्व हम यह भी देखने का प्रयास करेंगे कि गांधीजी की भांति ही क्या चौधरी साहब ने समस्याओं को सही परिप्रेक्ष्य में समझने और उसकी गहराई में जाने का प्रयास करने के बाद ही यह रूपरेखा प्रस्तुत की है या नेहरू की भांति कुछ प्रयोग करने भर के लिए जल्दीबाजी में एक वैकल्पिक रास्ता चुन लिया और उसपर चलने के लिए कटिबद्ध हो गये।

समस्या : चरण सिंह की दृष्टि में

अपनी पुस्तक के प्रथम पृष्ठ के तीसरे ही वाक्य में चौधरी साहब ने लिखा—"दुर्भाग्यवश जो भारत १९२५ तक अन्न का कुल निर्यातक

था बंगाल के अकाल के बाद से कुल आयातक हो गया। १९७० में समाप्त हुए २० बरसों में औसतन प्रतिवर्ष २०७.८ करोड़ रुपये का खाद्यान्न आयात किया जाता रहा। गत पांच वित्तीय बरसों १९७१–७६ के बीच तो यह धनराशि २८९.२ करोड़ रुपये तक पहुँच गई।" देश के निर्माताओं ने इस भ्रम में कि कृषि और औद्योगिक विकास एक दूसरे के पूरक हैं औद्योगिक विकास का काम हाथ में लिया। इससे कम जोत और अनुत्पादक खेतों के मालिक औद्योगिक क्षेत्रों की ओर कमाने के लिए चल पड़े। इसका कुफल यह हुआ कि महानगरों में तथा औद्योगिक क्षेत्रों में सुरसा की भांति आबादी बढ़ चली और गांव वीरान होने लगे।

कृषि और उद्योग को एक दूसरे का पूरक समझने वालों की अभिवृत्ति को चौधरी साहब भारत की आर्थिक दुरवस्था की जड़ मानते हैं।

भारतीय अर्थ व्यवस्था में कृषि का चूँकि प्रमुख हिस्सा है। इसलिए इस क्षेत्र की वास्तविकताओं को सामने रखना जरूरी है। आंकड़ों को और वास्तविकताओं को देखने से ऐसा लगता है कि कभी आवश्यकता ही अनुभव नहीं की गई अन्यथा वरीयता क्षेत्र के चयन में इतनी बड़ी भूल न की गई होती।

यह कितनी बड़ी विडंबना है कि देश में ६७.४ प्रतिशत पुरुष श्रमिक जो खेती के साथ जुटे हुए हैं उनमें केवल ४६.३५ प्रतिशत के पास ही अपनी भूमि है। शेष २१.०५ खेतिहर मजदूर के रूप में जीवनयापन करते हैं। दूसरी ओर ५०.६ प्रतिशत कृषक १९७०–७१ तक मात्र ९ प्रतिशत कृषि भूमि पर काम करते थे जब कि मात्र ३.९ लोगों के पास देश की ३०.९ प्रतिशत कृषि भूमि है। इसका अर्थ यह हुआ कि उपलब्ध भूमि का भी भरपूर उपयोग नहीं हो रहा है और देश की भारी श्रम शक्ति बाढ़ के जल की तरह व्यर्थ बहती जा रही है।

१९६०–६१ में देश में कुल कृषि योग्य भूमि १३ करोड़ ३० लाख हेक्टेयर थी। १९७३-७४ तक कृषि योग्य भूमि का रकबा बढ़ाकर १४

करोड़ १० लाख हेक्टेयर तो किया गया मगर यह कितनी बड़ी विडंबना है कि इस भूमि में से महज ३ करोड़ २० लाख हेक्टेयर भूमि ही सिंचित है। इस तरह एक चौथाई भूमि ही आजतक के प्रयास द्वारा सिंचित बनाई जा सकी।

आज महज २ करोड़ ६० लाख हेक्टेयर ही ऐसे खेत हैं जिनसे कई फसलें ले पाना संभव है। सिंचाई की कुल व्यवस्था करना शासन का कुल दायित्व है।

भूमि के बाद श्रमिक और पूँजी का स्थान आता है। लेकिन हालत यह है कि देश के अधिकांश भागों में आज श्रमिकों की बहुलता है। बहुलता का मतलब यह कि यदि श्रमिकों को गैर-कृषि पेशे की ओर स्थानान्तरित भी किया जाय तो उत्पादन में किसी प्रकार की वृद्धि संभव नहीं। पूँजी की स्थिति यह है कि कृषि उत्पादन बढ़ाने के बार-बार लिये गये संकल्पों के बावजूद कृषि पर व्यय नहीं किया गया।

कृषक समाज की स्थिति अत्यन्त दयनीय है। ऋणग्रस्तता के शिकंजे में डूबा किसान पूँजी के अभाव से रो रहा है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार देश में ग्रामीण ऋणग्रस्तता ६००० करोड़ रुपये से ऊपर है।

१९६०–६१ में रिजर्व बैंक द्वारा कराये गये सर्वेक्षण से पता चलता है कि ६५ से ७० प्रतिशत तक छोटे किसान, हरिजन और आदिवासी ऋणग्रस्त हैं और ७० प्रतिशत ऋण महाजनों का है।

इससे यह अनुमान सरलता से लगाया जा सकता है कि किसान कृषि पर अधिक विनियोजन करने की स्थिति में नहीं हैं और उसे सरल और आसान शर्तों पर ऋण उपलब्ध कराने की व्यापक और सघन योजना बनाये बिना काम चलने वाला नहीं है।

सच पूछा जाय तो दूसरी पंचवर्षीय योजना के बाद इस क्षेत्र की निरन्तर उपेक्षा की गई। १९४७ से ही ग्रामीण क्षेत्र की कुल प्रतिव्यक्ति

आय या जोवन स्तर में निरन्तर गिरावट ही आती रही। आज स्थिति भयावह है।

अब आइये उद्योगों की ओर। सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योगों पर बहुत जोश खरोश के साथ कांग्रेस सरकार ने व्यय किया था। मार्च १९७६ तक कुल मिलाकर सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों पर १०,९९६ करोड़ रुपया लगा हुआ था, अर्थात संगठित उद्योग पर लगी हुई देश की कुल पूँजो का आधा।

निजी उद्योगों का हाल यह है कि १९६६ से १९७५-७६ के बीच बीस प्रमुख औद्योगिक घरानों की हैसियत २,३३५ करोड़ रुपये से बढ़कर ५,१११ करोड़ रुपये हो गयी। इतना ही नहीं देश की सबसे धनी गिनी-चुनी कम्पनियों में २० २५ तो विदेशी कम्पनियां आ गयीं। इन बीस विदेशी कम्पनियों की हैसियत भी गत दशक में १३८ प्रतिशत बढ गयी।

सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के उद्योगों पर इतना भारी व्यय तो हुआ मगर उसकी तुलना में लाभ किसे मिला? न जनता के जीवन स्तर में वृद्धि हुई और न मंहगाई, मूल्य वृद्धि को रोका जा सका। उल्टे देश पर कर्ज ही चढ़ता चला गया।

चौधरी साहब ने लिखा है—अंग्रेज जाते समय अरबों रुपये की पूंजी छोड़ गये थे लेकिन १९५०–५१ तक देश पर ३२ करोड़ रुपये का विदेशी कर्जा चढ़ गया और वह निरन्तर बढ़ता ही रहा। स्थिति यहाँ तक पहुंच गई कि १९५१–७६ के बीच देश १७, ६५४·६ करोड़ रुपये का कर्जदार हो गया। इनमें कुछ विदेशी कर्जा शामिल नहीं हैं। विदेशी पूंजी का निवेश भी इतनी ही तेजी के साथ बढ़ा। १९४८ में देश में जहाँ मात्र २६० करोड़ रुपये की विदेशी पूंजी लगी हुई थी १९७३ में यह बढ़कर १,८१६·३ करोड़ रुपये की हो गयी। इन विदेशी कम्पनियों द्वारा भारत से विभिन्न मदों में ८८·८८ करोड़ रुपया विदेशों में भेजा गया। इससे विदेशों को अच्छा खासा लाभ जरूर हुआ।

भारत की जनता को यह जानकर कम आश्चर्य नहीं होगा कि १९७५ में भारत सरकार ने विदेशी कम्पनियों को भारत में २५ प्रतिशत और विस्तार की छूट प्रदान की थी।

चौधरी साहब का निष्कर्ष है कि—'देश में पूंजी प्रधान तकनीक अपनाने और श्रम की उपेक्षा का नतीजा दुहरी आर्थिकी है—समृद्धि के कुछ थोड़े से टापू जिनके प्रतीक नगर हैं और जो घिरे हुए हैं गाँवों और गन्दी बस्तियों के रूप में दुःख के विशाल सागरों से।'

औद्योगिक क्षेत्रों में वेतन का अपना अलग दर्शन है, वेतन में भारी असमानता व्याप्त है। संगठित उद्योग में एक सफाई मजदूर ४०० रुपये प्रतिमाह और ड्राइवर १२०० रुपये प्रतिमाह पाता है तो स्नातक मात्र ४५० रुपये और अध्यापक ६५० रुपये प्रतिमाह। निजी उद्योग के किसी-किसी अध्यक्ष को ४६ हजार रुपये प्रतिमाह तक वेतन प्राप्त होता है।

चौधरी साहब की दृष्टि में भारी उद्योग का सबसे बुरा नतीजा है बढ़ती हुई बेरोजगारी। १९४७ में औसत कारखानों में जहां ९३ श्रमिक लगते थे अब मात्र ६१ रह गये हैं। कारखाने बढ़े मगर रोजगार का अवसर दो तिहाई रह गया। कपड़ा मिलों में आज मात्र ९ लाख मजदूर हैं। वे जितना कपड़ा तैयार करते हैं यदि करघे पर तैयार हो तो १ करोड़ ८ लाख श्रमिकों की आवश्यकता होगी। इस तरह एक करोड़ लोगों को अतिरिक्त रोजगार मिल सकता है।

तीस बरसों के स्वराज में एक ओर तो गाँवों और नगरों में दरिद्रता का साम्राज्य व्याप्त है वहीं दूसरी ओर एकाधिकार का विस्तार होता जा रहा है। यह दुर्घटना मात्र नहीं है बल्कि गलत योजनाओं का दुष्परिणाम है।

चौधरी चरण सिंह ने अपनी पुस्तक में इन सारी बातों को सरकारी और गैरसरकारी आंकड़ों, आर्थिक विशेषज्ञों की पुस्तकों से लिये गये उद्धरणों, रपटों और विश्वभर से उपलब्ध सूचनाओं के आधार पर

प्रस्तुत किया है जिसका खंडन करना सरल नहीं है। इससे लगता है कि समस्याओं की सही पहचान करने में उन्होंने काफी परिश्रम किया है।

एक अन्य स्थल पर चौधरी साहब ने कहा—बड़ी इकाइयों वाली व्यवस्था से जनतंत्र मजबूत नहीं होता। या तो पूंजीपतियों का जोर बढ़ता है या सोवियत रूस की तरह सरकार मालिक बन जाती है। चौधरी साहब ने जिस खतरे की ओर संकेत किया है वह सही है और यथार्थ पर आधारित है। संसार के अन्य देशों की ओर नजर उठाकर देखी जाय तो इसकी सचाई अधिक साफ हो जायगी।

समस्या का स्वरूप देखने के बाद अब सवाल उठता है कि भारत की समस्याओं के निराकरण और करोड़ों नागरिकों के जीवन स्तर को उठाने के लिए कौन सा सोच निकाला जाय। संसार में अनेक सोच हैं—मार्क्सवादी, पूँजीवादी, माओवादी, समाजवादी और गान्धीवादी। चौधरी चरण सिंह की सोच क्या है इस पर भी विचार करना चाहिए।

सोच : चरण सिंह की दृष्टि में

समाजवाद का यह हाल है कि विश्व में जितने भी समाजवादी चिन्तक हैं उन सबने समाजवाद की अपनी परिभाषायें की हैं। चौधरी साहब ने एक साक्षात्कार में चुटकी लेते हुए कहा था—'सुना है समाजवाद की ५५ परिभाषाएँ हैं।' इसी क्रम में उनका कहना है कि 'जिसे वैज्ञानिक समाजवाद कहते हैं उससे मैं बिलकुल सहमत नहीं हूँ। इसका कारण यह है कि इसकी रूढ़ परिभाषा के अनुसार कृषि और उद्योग पर मालिकाना समाज का होगा। समाज के मालिकाने का मतलब सरकार होता है जैसा कि साम्यवादी देशों में देखा जा रहा है। कृषि प्रधान देश की अर्थ व्यवस्था का मूल आधार कृषि है। और कृषि की उन्नति कभी भी उस सूरत में नहीं हो सकती यदि भूमि का मालिकाना सरकार के हाथ में हो। यह प्रयोग तो सोवियत रूस में ही बुरी तरह असफल हो चुका है।'

श्री सिंह ने एक अन्य स्थल पर कहा है—'ऐसी अर्थ व्यवस्था हो कि व्यक्ति दूसरे के अधीन न हो। व्यक्ति स्वयं मालिक भी हो मजदूर भी हो। ऐसा कृषि के क्षेत्र में भी हो और औद्योगिक क्षेत्र में भी। इससे पैदावार ज्यादा बढ़ती है। छोटी इकाइयों में हर आदमी रोजगार का मालिक होगा। खेत का मालिक होगा और उसके तरीके जनतान्त्रिक होंगे।'

समाजवादी व्यवस्था में आवश्यक रूप से योजना ऊपर से नीचे को ओर आती है। इससे स्वतन्त्रता का अपहरण होता है इसलिये कि जनता से यह अपेक्षा की जाती है कि वह आज्ञाओं को शिरोधार्य करे बजाय इसके कि वह अपनी निजी सोच का प्रयोग करे। चौधरी साहब ने समाजवादी सोच की दूसरी खामी यह बताई कि यह व्यवस्था अकुशलतापूर्ण है इसलिये कि करोड़ों जनता के मस्तिष्क में ज्ञान का जो अगाध सागर है इस व्यवस्था में उसका सम्यक् उपयोग असम्भव है।

श्री चरण सिंह ने अपनी पुस्तक में एक स्थल पर कहा है—'भारत में इस्पात की मात्रा या कारों और टेलिवीजन सेटों की संख्या जिनका हम उत्पादन करते हैं उससे प्रगति नहीं आंकी जा सकती बल्कि इससे कि देश के निम्नतम व्यक्ति के लिये हम खाना, कपड़ा, मकान, स्वास्थ्य, शिक्षा आदि कितना देते हैं इससे आंकी जायेगी। यह सोच गान्धी जी की है।

इस प्रकार गान्धी की योजना नीचे से ऊपर को चलने वाली है। जिसमें आम लोगों की सुख सुविधा और समृद्धि निहित है और यही वास्तविक लोकतन्त्र की भूमि है। यही वह अर्थ व्यवस्था है जिससे बेरोजगारी दूर होगी और लोकतान्त्रिक संस्थायें मजबूत होंगी।

समाजवाद, साम्यवाद या अन्य किसी वाद में लोकतन्त्र न तो जीवित रह सकता है और न सही तरीके से काम कर सकता है। गान्धी जी की अर्थनीति ही संसार में ऐसी है जो लोकतन्त्र के साथ साथ आगे

बढती चलती है और समृद्धि को भी समेटे रहती है। उदारवाद या पूँजीवाद में लोकतन्त्र चल सकता है मगर वह जनता का लोकतन्त्र न होकर पूँजीपतियों का लोकतन्त्र होगा। उसमें कुछ थोड़े से घराने देश की अधिकतम पूँजी पर कब्जा जमा लेंगे और अधिकतम राजनीतिक लाभ अर्जित करते रहेंगे।

महात्मा गान्धी की मान्यता थी कि कृषि क्षेत्र का विकास गैर कृषि-क्षेत्र पर निर्भर नहीं। यद्यपि गैर कृषिक्षेत्र का विकास कृषि क्षेत्र को विकास करने में सहायता दे सकता है। दूसरी ओर गैर कृषिक्षेत्र तब तक समृद्ध नहीं हो सकता जब तक कि कृषि क्षेत्र रास्ता न दिखाये या कम से कम गति न पकड़ ले। चौधरी चरण सिंह की दृष्टि में यह न बदला जा सकने वाला नियम है।

१९४७ में भारत के आजाद होने के बाद दुनिया बड़ी हैरत के साथ यह विचित्र नजारा देख रही है कि अत्यधिक औद्योगिक राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र अमेरिका मुख्यत: कृषि प्रधान देश भारत को अन्न दे रहा है। भारत वह देश है जहाँ ७५ प्रतिशत नगरीय परिक्षेत्र खाद्यान्न के भीतर हैं और ५२·२५ प्रतिशत कार्यकारी शक्ति खाद्य उत्पादन में ही पूर्णत: लगी है।

चौधरी साहब की समस्या के सन्दर्भ में की गई यह सोच ही सही है और इस सोच के आधार पर ही कोई रास्ता निकाला जा सकता है है या निकाला जाना चाहिए।

रास्ता तरक्की का

भारत की आर्थिक नीति पुस्तक में चौधरी चरण सिंह ने भारत की तरक्की का रास्ता भी बताया है। वे कहते हैं—"यदि हम यह चाहते हैं कि हमारा मुल्क तरक्की करे तो इसके लिए दो ही रास्ते हैं : प्रति एकड़ कृषि को पैदावार बढ़ाई जाय और साथ साथ प्रति एकड़ श्रमिकों की

संख्या घटायी जाय : दूसरे, राष्ट्रीय मनोविज्ञान में इस माने में बदलाव लाया जाय, विशेष रूप से हिन्दू लोग इस मान्यता का त्याग करें कि यह जगत माया मात्र है और, एक व्यक्ति साथ ही एक राष्ट्र के रूप में यह कशिश पैदा हो कि हमें अपनी आर्थिक स्थिति में उन्नति करनी है, और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये, हमारे लोग परिश्रमपूर्वक और अच्छे ढंग से काम करना सीखें।

वे यह मानते हैं कि हमारा लक्ष्य यह नहीं है कि प्रति व्यक्ति या प्रति कृषि श्रमिक उत्पादन को बढ़ाया जाय बल्कि यह है कि प्रति एकड़ पैदावार में वृद्धि की जाय। कृषि की समस्याओं के सन्दर्भ में जोत पर भी विचार किया जाना चाहिए। इस दिशा में चौधरी साहब ने तीन रास्ते बताये हैं :—

अ–प्रति वयस्क श्रमिक के लिये २७.५ एकड़ से अधिक भूमि न दी जाय और इस सीमा से अधिक भूमि प्राप्त करके उसे भूमिहीन या ऐसे किसानों को दी जाय जिनके पास २.५ एकड़ से कम भूमि हो,

ब–२.५ एकड़ की बन्दिश लगायी जाय और कानून को इस तरह बदला जाय कि किसी भी स्थिति में प्रति व्यक्ति जोत सीमा इससे कम न घटे; और

स–भूमि अधिग्रहण कानून का भविष्य के लिये इस प्रकार नियमन किया जाय कि उच्चतम और निम्नतम सीमा में किसी प्रकार परिवर्त्तन न हो।

देश में हदबन्दी और जोत सीमा कानून तो बराबर बनते रहे लेकिन कभी ईमानदारी से इसे लागू नहीं किया गया। वैसे तो १९७१ तक १३ राज्यों में जोत सीमा कानून बने लेकिन उससे प्राप्त भूमि का उचित बंटवारा नहीं हुआ। इन कानूनों से छठे दशक में १० लाख हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि प्राप्त हुई थी जिसका आधा भी नहीं बांटा जा सका।

फिर १९७१–७२ में जोत हदबन्दी लागू होने के बाद ४० लाख हेक्टेयर भूमि प्राप्त होने को थी। जिसका एक चौथाई ही घोषित हो सकी। १९७५–७६ तक राज्य सरकारों को १, ३५, ५९३ एकड़ भूमि ही मिल सकी। १९७५ के सितम्बर माह तक राज्यों द्वारा भेजे गये रिटर्न के अनुसार कुल आठ राज्यों में ३, ४६, ५७३ एकड़ भूमि प्राप्त होने की बात थी। कहा नहीं जा सकता कि वितरण का कार्य कहाँ तक आगे बढ़ पाया।

असलियत तो यह है कि फर्जी और बेनामी पट्टों के कारण हदबन्दी के सारे कानून निष्प्रभावी हो गये हैं।

चूंकि वे सहकारी और सामूहिक खेतो के विरोधी रहे हैं और इन रास्तों को सर्वथा गलत समझते हैं इसलिये उनकी दृष्टि से सबसे सीधा और उचित मार्ग यह है कि जोत की चकबन्दी कर दी जाय। इससे भूमि, श्रम और पूंजी का समुचित उपयोग होगा।

औद्योगिक ढांचे के सम्बन्ध से श्री सिंह ने महात्मा गांधी का कथन ही उदघृत कर दिया है।

चौधरी साहब ने वैकल्पिक रणनीति के प्रारंभ में ही कह दिया है—'यदि देश को बचाना है तो नेहरुपन्थी मार्ग को गांधीवादी रास्ते पर लाना होगा। उन्होंने बताया है कि कृषि और उद्योग की समन्वित नीति का पालन कर कुछ देशों ने आशातीत सफलता प्राप्त की है। जापान इसका प्रमाण है और चीन १९६२ से इस रास्ते पर चल रहा है।

बड़े पैमाने पर उत्पादक रोजगार की व्यवस्था करने का रास्ता भी चौधरी साहब ने सुझाया है :—

१–कृषि, जिसमें सम्मिलित है पशुपालन, कम्पोस्ट खाद निर्माण, स्वास्थ्य सुरक्षा तथा गोबर गैस।

२–ग्राम्य कार्य जैसे सिंचाई परियोजनायें, भूमि संरक्षण, भूमि सुधार वनरोपण।

३–ग्रामीण तथा कुटीर उद्योग।

उद्योगों के सम्बन्ध में उनकी नीति काफी कठिन है। वे यह चाहते हैं कि विभिन्न उद्योगों के बीच कानून द्वारा विभाजक रेखा खींच दी जाय। ताकि एक दूसरे के क्षेत्र में किसी प्रकार की घुसपैठ संभव ही न हो सके। चौधरी साहब का स्पष्ट अभिमत है कि कुटीर और लघु उद्योग जो माल पैदा कर सकते हैं या जो सेवायें दे सकते हैं भविष्य में किसी भी मध्यम या बड़े उद्योग को उस क्षेत्र में आने की इजाजत नहीं दी जायेगी और किसी भी लघु उद्योग को उस क्षेत्र में स्थापित करने की इजाजत नहीं दी जायेगी जिसे कुटीर उद्योग तैयार कर सकते हैं।

श्री चरण सिंह इस अभिमत के हैं कि भारत की अर्थ नीति का लक्ष्य बदला जाना चाहिए और इसे कुल राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि करने के बजाय उत्पादक रोजगार में वृद्धि की दिशा में ले जाना चाहिए। इससे राष्ट्रीय आय में भी वृद्धि अपने आप होगी।

आम जनता की क्रय शक्ति जब तक नहीं बढ़ायी जाती औद्योगिक उत्पादनों में किसी भी प्रकार की वृद्धि की कल्पना नहीं की जा सकती। देश इस नतीजे पर पहुँच चुका है कि साम्यवादी नीति पर चल कर जो बड़े-बड़े उद्यम आज स्थापित किए गये हैं उनसे देश को न तो कोई आर्थिक लाभ ही हुआ है और न जनता के जीवनस्तर में ही कोई वृद्धि हुई है। इसलिए कल्याण का एकमात्र रास्ता जो आज खुला हुआ है वह है गांधी द्वारा दिखाया मार्ग और इस धरती की अर्थ नीति जिस पर चलकर ही देश का कल्याण किया जा सकता है। यही तरक्की का एकमेव मार्ग है। तीस वर्षों के प्रयोग के बाद, समाजवादी प्रयोग के बाद स्वाभाविक है कि इस निष्कर्श पर पहुँचा जाय कि इस मार्ग का त्याग होना चाहिए और नये मार्ग का चयन करना चाहिए।

इसमें कोई दो राय नहीं कि चौधरी चरण सिंह की इस पुस्तक ने भारतीय चिन्तन में एक गहरी हलचल पैदा कर दी है और आर्थिक

विचारकों के विचारों को काफी हद तक झकझोर कर रख दिया है। वैकल्पिक अर्थनीति की इस प्रस्तावना का निश्चित रूप से विभिन्न लोगों पर गहरा असर पड़ा है और लोग सोचने विचारने लग गये हैं। अभी तक गांधीजी के विचारों को असामयिक, अप्रासंगिक, खयाली ओर मनोलोक में विचरण करने वाला मान कर त्याग दिया जाता रहा है और उस पर गंभीरतापूर्वक सोचने की आवश्यकता भी कभी अनुभव नहीं की गई। सच पूछा जाय तो गांधी जी के चिन्तन को चौधरी साहब ने अमली जामा पहनाने का एक गुरुतर प्रयास किया है और बड़े जोरदार तथा तर्कपूर्ण ढंग से उन्होंने गांधीवादी आर्थिक चिन्तन को प्रस्तुत किया है जिसकी उपेक्षा सरलता के साथ नहीं की जा सकती।

जाहिर है कि इस पुस्तक की चर्चा व्यापक पैमाने पर हो। हुई भी है। देश के अनेक राजनीतिज्ञों, अर्थशास्त्रियों, विचारकों तथा बुद्धि-जीवियों में इस नयी आर्थिक नीति पर बहस शुरु हो गई है और अनेक विचार सामने आये भी हैं। अभी तक जो आलोचनायें आई हैं उन पर विचार कर लेना समीचीन होगा। कम से कम इतना तो पता चल ही जायगा कि इनकी आलोचना में कितना सैद्धान्तिक दम दिलासा है।

सोच की आलोचनायें अथवा प्रतिपक्ष

डा० वी० के० आर० वी० राव देश के सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री और चिन्तक हैं। उन्होंने इलस्ट्रेटेड वीकली के १ जनवरी १९७८ के अंक में इस पुस्तक की समीक्षा विस्तार से दी है। उनकी आलोचनाओं का मुद्दा हम यहाँ देना चाहेंगे।

डा० राव का कहना है कि आर्थिक विकास और जीवन स्तर में चढ़ाव लाने वाले तत्वों में वृद्धि मात्र पूर्ण रोजगार पर निर्भर नहीं वरन् पूंजी संग्रह और विज्ञान तथा टेक्नोलाजी के उचित प्रयोग पर भी निर्भर है। पूंजी संग्रहण के लिए बचत का विकास प्रतिव्यक्ति उत्पाद-

कता पर निर्भर है और इस पर कि वह किस सीमा तक इसे अपने उपभोग में लगाता है। और उत्पादकता बदले में इस पर निर्भर है कि प्रति श्रमिक कितनी पूंजी विनियोजित होती है। अतः इस दृष्टि से यदि हम निम्न पूंजी टेक्नोलाजी का वरण करते हैं, जबकि कुल उत्पादन बढ़े, तो प्रति श्रमिक पैदा की गई बचत में गिरावट आयेगी। इस सीमा तक अल्प पूंजी संग्रहण होगा इसलिये आर्थिक विकास की संभावना भी कम होगी और जीवनस्तर में वृद्धि की शक्ति भी कम होगी।

डा० राव ने यह भी कहा है कि श्री चरण सिंह के इस मॉडल में भारतीय श्रमिक को दी जाने वाली उत्पादकता के अपेक्षित स्तर के लिए आवश्यक अतिरिक्त पूँजी की व्यवस्था के सवाल का उत्तर नहीं मिलता।

डा० राव का कहना है कि श्रम प्रधान तकनीक इतनी बचत पैदा नहीं कर सकती कि राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि और जीवन स्तर उठाने के लिए आवश्यक पूँजी संग्रहण में सहायक हो सके।

२२ जनवरी १९७८ के कलकत्ता से प्रकाशित 'संडे' नामक साप्ताहिक पत्र में पश्चिम बंगाल सरकार के वित्त मंत्री श्री अशोक मित्र की भी एक समीक्षा चौधरी साहब की पुस्तक पर आई है। कहा नहीं जा सकता कि अर्थशास्त्र और वित्त का क ख ग जानने के कारण इन्हें वित्तमंत्री पद दिया गया या महज राजनीतिक दल में वरीयता के आधार पर। इसलिये कि इनकी आलोचना का मुख्य मुद्दा यह है कि चूंकि श्री चरण सिंह किसान हैं इसीलिए उन्होंने एक ऐसी अर्थनीति की वकालत की है जो किसानों के हित में है।

श्री मित्र का कहना है कि इस व्यवस्था में असंगति यह है कि सारी व्यवस्था राज्य द्वारा किसानों के लिए की जाय और उससे कुछ कृषक कुलक फलें फूलें यह उचित नहीं है। उनका कहना है कि यह वैकल्पिक अर्थनीति वर्गहित की द्योतक है।

श्री मित्र कहते हैं कि मात्र यह सत्य कि किसी विशेष आर्थिक क्षेत्र में पूँजी उत्पादन औसत निम्न है इसका यह अर्थ नहीं कि हम अपने पूरे साधनों को उसी दिशा में विनियोजित कर दें। उनका कहना है कि गत ३० बरसों का अभिशाप यह नहीं है कि हमने औद्योगिक आधार को अधिक विस्तृत करने का प्रयास किया। बल्कि अभिशाप कोई और है और वह यह कि यह आधार निर्मित करने के बाद इसका हमने बहुत कम उपयोग किया।

श्री मित्र ने आगाह किया है कि यदि चौधरी चरण सिंह की इस अर्थनीति पर देश चला तो इस देश में रक्तरंजित क्रान्ति होगी यह संभव है कि उसे चौधरी चरण सिंह अपनी आंखों से देखने के लिए मौजूद न रहें।

यह और बात है कि अर्थ और वित्त के मामले में कोई गंभीर चिन्तन श्री चन्द्रजीत यादव का नहीं रहा है और न यही कहा जा सकता है कि उन्होंने इसका गहन और गंभीर ज्ञान ही अर्जित किया है मगर यह सही है कि मार्क्स के आर्थिक सिद्धान्तों का बहुत गहराई के साथ उन्होंने अध्ययन किया है और दीर्घकाल तक केन्द्रीय सरकार में महत्वपूर्ण पदों पर रहने के कारण उन्होंने देश की अर्थव्यवस्था को काफी करीब से देखने और समझने का प्रयास किया है। श्री चन्द्रजीत यादव ने भी चौधरी चरण सिंह की वैकल्पिक अर्थनीति की समीक्षा की है। उनके विस्तृत विचार 'धर्मयुग' साप्ताहिक के १५ जनवरी १९७८ के अंक में प्रकाशित हुए हैं। उनका कहना है कि छोटे और कुटीर उद्योगों के महत्व के नाम पर न केवल बड़े उद्योगों की भूमिका और महत्व को कम किया जा रहा है, बल्कि बीसवीं शताब्दी में अठारहवीं शताब्दी की उद्योग नीति की वकालत की जा रही है। डर है कि इस नीति को लागू करने के प्रयास में जनता पार्टी देश की प्रगति की रफ्तार को बहुत धीमी कर देगी और देश आगे बढ़ने के बजाय स्थिर अर्थव्यवस्था के चक्रव्यूह में फँस जायेगा।

श्री चन्द्रजीत यादव का कहना है कि चौधरी साहब की इस नीति को स्वीकार कर लिया जाय तो उसका अर्थ होगा भारत की प्रगति और विकास की धारा का न केवल अवरुद्ध हो जाना, बल्कि देशी और विदेशी पूँजीपतियों के हाथ में देश के भविष्य को बन्धक रख देना। यह अत्यन्त खतरनाक विचारधारा है। उन्होंने यह भी आरोप लगाया है कि चौधरी साहब ने पूँजीवादी व्यवस्था के चरित्र और उसकी स्वार्थ-परता की नीति को बिलकुल ध्यान में नहीं रक्खा है।

उन्होंने अपनी समीक्षा का निचोड़ देते हुए कहा है—इस आर्थिक नीति में कोई नयापन नहीं है बल्कि इसकी कमजोरी यह है कि पूँजी-वादी व्यवस्था के जो लाभ होते हैं—उत्पादन वृद्धि और आधुनिक औद्योगीकरण—न तो वह संभव होगा और न ही समाजवादी व्यवस्था की जो निर्विवाद उपलब्धियां हैं, तीव्र प्रगति, शोषण और विषमता का अन्त, उत्पादन के साधनों पर समाज का अधिकार, व्यक्ति और राष्ट्र की सम्पन्नता, वही प्राप्त हो सकेंगी।

धर्मयुग के इसी अंक में श्री गणेश मंत्री ने चौधरी चरण सिंह की अर्थनीति की प्रशंसा तो की है मगर यह नुक्ता भी जड़ दिया है—'लेकिन आज चुनौती अमल की है और यथास्थिति को तोड़ने की है। इस बात का कोई सकारात्मक संकेत नहीं है कि जनता पार्टी में इस चुनौती को स्वीकार करने के लिए कहीं कोई संकल्प भी है।' मगर ध्यान देने की बात तो यह है कि यह अर्थनीति अभी के लिये नहीं है और न वर्त्तमान लोगों के जिम्मे ही इसको अमली जामा पहनाने का कुल दायित्व है। यह तो दीर्घकालिक नीति है और इसके कार्यान्वयन के लिए एक नयी पीढ़ीका निर्माण करने की आवश्यकता होगी। यह चुनौती उन सभी लोगों को स्वीकार करनी होगी जो देश का आर्थिक विकास भी चाहते हैं और लोकतंत्र को भी देश में कायम रहते देखना चाहते हैं। चौधरी साहब की वैकल्पिक अर्थनीति की दृष्टि इस पक्ष पर भी अधिक ध्यान देती है।

वे सही नहीं हैं : उत्तरपक्ष

यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि चौधरी चरण सिंह ने जो सोच की है उसे आधुनिकतम अर्थशास्त्रियों, वित्त विशेषज्ञों, विचारकों, समितियों ओर आयोगों की सिफारिशों से यथास्थान पुष्ट भी किया है इसलिये इस सोच को जनता पार्टी के एक नेता की बात कहकर हवा में नहीं उड़ाया जा सकता और न इसको इतनी आसानी के साथ उपेक्षा ही की जा सकती है। जिस नींव पर चौधरी साहब का आर्थिक ढांचा खडा हुआ है उसके सम्बन्ध में दावे के साथ यह कहा जा सकता है कि इस देश को उसके निर्माता गान्धी ने जितना देखा पहचाना और समझा था उतना किसी भी पूँजीवादी या मार्क्सवादी या समाजवादी ने नहीं। मार्क्स के फार्मूले पर चलने वाले न कभी इस देश को समझ पाये हैं और न महात्मा गान्धी के विचारों को।

यही कारण है कि अपने-अपने बने बनाये राजनैतिक आर्थिक पैमाने के परिप्रेक्ष्य में चौधरी चरण सिंह की वैकल्पिक अर्थनीति का मूल्यांकन इन लोगों द्वारा किया गया। यदि देश को और यहाँ की समस्याओं को सामने रखकर मूल्यांकन किया गया होता तो उनका निष्कर्ष भी चौधरी साहब के निष्कर्ष के आसपास ही कहीं पड़ता। दिक्कत तो यही है कि आज का चिन्तक बहुत अधिक राजनीतिक हो गया है। वह राजनीतिक नीतियों के दायरे से बाहर निकल नहीं पाता और ऐसे पैमानों के गिर्द ही सिमटा रह जाता है जिससे वह बन्धा होता है।

यह क्यों नहीं सोचा जाता कि पूँजीवाद और साम्यवाद दोनों ही आर्थिक नीतियाँ सदियों पुरानी हो चुकी हैं। सच तो यह है कि वर्त्तमान साम्यवाद भी आज वह नहीं जिसकी प्रस्थापना कार्ल मार्क्स ने की थी। पूँजीवाद भी वह नहीं रहा जिसकी विकृतियों को देखकर मार्क्स को नये मार्ग की रचना करनी पड़ी। दोनो ही काफी बदल चुके हैं। इनके मुकाबले गान्धीवाद सबसे अधिक नया आर्थिक दर्शन है, जो इसी

धरती से पैदा हुआ है और यहां की समस्याओं से उपजा हुआ है। राष्ट्र के सामने आज जो विकराल समस्यायें उपस्थित हैं उसका वास्तविक हल गान्धीवाद के ही पास है। शौक के लिये भले ही इसे गान्धीवादी समाजवाद कह लें या गान्धीवादी साम्यवाद इसमें कोई फर्क नहीं। वैसे गान्धी जी स्वयं को समाजवादी कहलाना पसन्द नहीं करते थे और आज भारत के सन्दर्भ में तो समाजवाद भी एक गन्दा और कलुषित शब्द मात्र रह गया है।

इस परिप्रेक्ष्य में हम उन आलोचकों के मतों का उत्तर देने का प्रयास करेंगे जिन्होंने चौधरी साहब की इस अर्थनीति के संबन्ध में नीतिपरक आलोचना करने का प्रयास किया है। वैसे बहुत सारे सैद्धान्तिक प्रश्नों पर स्वयं चौधरी साहब ने अपनी पुस्तक में ही कहा है, शायद समीक्षकों की दृष्टि उन हिस्सों की ओर गयी ही नहीं।

डा० वी० के० आर० वी० राव का यह कहना सही है कि उच्च पूँजी विनियोजन केन्द्रित विकास व्यूहन प्रति श्रमिक अधिक पूँजी निर्माण के लिए बचत उत्पन्न करता है लेकिन ऐसे व्यूहन में जब श्रमिकों की संख्या अत्यल्प होगी तो कुल उपलब्ध बचत जो पूँजी निर्माण में आयेगी वह भी कम होगी इसके विपरीत ऐसी व्यवस्था जिसमें कई गुना अधिक श्रमिक हिस्सा लेंगे और उत्पादन करेंगे, कम करेंगे लेकिन कुल उत्पादन अधिक होगा तो स्थिति बदल जायगी।

चौधरी साहब ने लिखा है—'पश्चिमी जगत में सरकारें और अर्थशास्त्री श्रमिक की उत्पादकता बढ़ाने के प्रति चिन्तित रहते हैं, जब कि हमें एक राष्ट्र के रूप में पूँजी की वृद्धि करने की दिशा में चिन्तन करना चाहिए, इसलिए कि हमारे पास पूँजी की कमी है न कि विकसित देशों की भांति श्रम की। तब दो रास्ते हैं उदाहरणार्थ कुछ थोड़े से लोगों के लिए उच्च आय या पूँजी प्रधान रास्ता, और सामान्य किन्तु बढ़ती हुई आय सबके लिए या जिसे श्रम प्रधान रास्ता कहते

हैं, हमें यह दूसरा ही रास्ता चुनना होगा जो कि जापान का रास्ता रहा है।' (पृष्ठ १००)

इसका कारण क्या है, और क्यों हमें यह रास्ता चुनना चाहिए ? चौधरी चरण सिंह का कहना है—'सस्ता श्रम हमारी सबसे बड़ी धरोहर है, इसे किसी भी स्थिति में भी बर्बाद होने नहीं दिया जाना चाहिए। कहना बेकार है कि इस मामले में ध्यान देने से रोजगार के अवसर बढ़ेंगे, आर्थिक विकास की दर में वृद्धि होगी, आय की असमानता घटेगी और निर्यात व्यापार को प्रोत्साहन मिलेगा।'

डा० राव की पूँजी प्रधान आर्थिकी के उत्तर में चौधरी साहब ने स्पष्टतः अपनी अवधारणा रक्खी है। उन्होंने लिखा—'श्रम प्रधान उद्योग में श्रमिक ही सबसे बड़ा हिस्सा प्राप्त करता है, जबकि पूँजी प्रधान इकाई में पूँजीपति। इसके साथ ही, सम्भवतः, हर व्यक्ति इनसे सहमत होगा कि स्व-रोजगार, जो साधारण श्रम प्रधान तकनीक है निश्चित करती है, कि वह मजदूरी के रोजगार भाड़े से हर माने में बेहतर है।' (पृष्ठ १२१)

डा० राव द्वारा उठाये गये कुल सवाल का जवाब चौधरी साहब के इस कथन से मिल जाता है—'रूढ़िवादी परम्परागत अर्थशास्त्रियों से सहमत होते हुए, हलांकि स्वतन्त्रता पूर्व काल में, नेहरू ने यह सोचा कि भारी पूँजी प्रधान उद्योग उच्च उत्पादन देंगे और, इस प्रकार ऊंची राष्ट्रीय आय या कुल राष्ट्रीय उत्पादन (जी० एन० पी०) होगा और गरीबी तथा बेरोजगारी खुद ही अपनी फिक्र करेंगे अगर एक बार हम जी० एन० पी० की फिक्र करें। तर्क यह दिया गया कि आर्थिक विकास की पहली शर्त्त है पूँजी की उपलब्धि, यह कि पूँजी प्रधान उद्योगों से आय का वितरण होगा और मुनाफे के अनुकूल होगा या धन का कुछ हाथों में केन्द्रीकरण होगा, यद्यपि इसे बहुत सारे शब्दों में कभी स्वीकार नहीं किया गया, यह कि धनी वर्ग जिनमें बचत की ज्यादे क्षमता होती

है, वे लोग जो कि पूँजी प्रधान उद्योगों से अधिक मुनाफा पैदा करते हैं वे बचत का एकत्रीकरण करेंगे और यह कि ऐसी बचत करने वालों द्वारा पुनः विनियोजित की जायगी स्वयं उद्योगपतियों द्वारा किसी नयी भारी या पूँजी प्रधान उद्योग में या उसे सरकार करों के रूप में लूट लेगी ताकि सार्वजनिक क्षेत्र में उद्योगों की स्थापना की जा सके, इस प्रकार यह क्रम आगे चलता जायगा जब तक कि लम्बे दौर में आर्थिकी स्वयं ही उत्पादक हो जायेगी, मध्यम और लघु उद्योगों को प्रोत्साहित करेगी और इस प्रकार रोजगार का व्यापक क्षेत्र तैयार हो जायेगा। इसी आधार पर जवाहर लाल नेहरू राष्ट्रीय आय में वृद्धि को योजना का चरम लक्ष्य मानकर चलने लगे।......जब कुछ अर्थशास्त्रियों ने पाया कि बड़े उद्योगों और बड़ी जोतों द्वारा लघु की तुलना में कम श्रम का उपयोग होता है, तो अन्य अर्थशास्त्रियों ने इसका विरोध किया और यह कहा कि छोटे उत्पादकों का विनियोजन विकास की गति को धीमा करेगा। उनका तर्क था कि श्रम प्रधान उद्योगों की आय इतने अधिक लोगों के हाथों में बंट जायेगी कि इतनी बचत ही न होगी जिसका विनियोजन है। या गतिशीलता आये।......वास्तविकता यह है कि रोजगार और उत्पादन में तथा रोजगार के साथ वृद्धि और आय में वृद्धि के बीच कोई पारस्परिक द्वन्द नहीं है।' आदि

उक्त पुस्तक के पृष्ठ ८५-८८ पर विस्तार के साथ सभी शंकाओं का समाधान कर दिया गया है। गान्धी का कहना था कि मैं अधिक उत्पादन नहीं चाहता बल्कि अधिक लोगों द्वारा उत्पादन चाहता हूँ। वे ऐसा इसीलिए मानते थे कि हमारे देश में श्रम की बहुलता है और रोजगार का अवसर सबको प्राप्त हो। गान्धी वादी विचारकों का ऐसा ख्याल है कि—'पूंजी सृजन के सिद्धान्त के अन्तर्गत पूंजी का सृजन, श्रम की उत्पादकता और श्रम को दिए गये पुरस्कार पर निर्भर है। इन बातों पर पूर्ण विचार करने से निश्चय होता है कि ग्रामोद्योग में बड़े उद्योगों से अधिक पूंजी का सृजन होगा।'

डा० राव और श्री अशोक मित्र की सैद्धान्तिक आपत्ति का इस प्रकार पूरा निराकरण हो जाता है। श्री मित्र का यह कहना भी गलत है कि चौधरी साहब देश की सारी पूँजी को कृषि में लाकर एक वर्ग का हित कर रहे हैं। जबकि चौधरी साहब की अर्थ नीति खेती पर कम से कम दवाव की बात कहती है। उनका कहना यह है कि खेती पर कम लोग निर्भर हों इसका स्वाभाविक अर्थ यह निकलता है कि कृष्येतर कार्यों में विकास उनका मूल है। श्री मित्र का यह कहना भी जड़ता और कूप-मण्डूकता है कि चौधरी चरण सिंह की अर्थनीति पर देश चला तो रक्त-रञ्जित क्रान्ति होगी। जबकि नक्सलपन्थियों ने ही यह सिद्ध कर दिया है कि नेहरू की गत तीस बरसों से चली आई नीति ही रक्तरञ्जित क्रान्ति का कारण है और इस नीति में चौधरी साहब आमूल चूल परि-वर्त्तन करने की हिमायत करते हैं।

मुट्ठी भर मजदूरों के हितों की रक्षा करने वाली कम्युनिस्ट पार्टी बड़े उद्योगों को चलाकर श्रमिकों की संख्या में वृद्धि करके अपनी राज-नीति जमाना चाहती है और देश में विप्लव पैदा करना चाहती है। बड़े पूँजीपति होंगे तो वे उनका आर्थिक दोहन करेंगे और पूँजीपतियों से प्राप्त धन का सत्ता प्राप्त करने में उपयोग करेंगे न कि श्रमिकों के हितों का रक्षण। यह नीति इस देश के लिए नहीं है और न इस पर चल कर देश तरक्की ही कर सकता है। बल्कि ऐसा लगता है कि यदि इस प्रकार की नीति देश में अधिक दिनों तक चली तो निश्चय ही बेरोज-गारों और किसानों की सामूहिक शक्ति इस देश में विप्लव के लिए उठ खड़ी होगी और वह शक्ति उन लोगों का सफाया कर देगी जो बड़े बड़े उद्यमों की वकालत करते आये हैं।

सम्भवतः श्री मित्र की आलोचना के सन्दर्भ में एक पत्रकार ने चौधरी साहब से प्रश्न किया—'किसानों के हितों की बात करने पर आप पर 'कुलक वर्ग' के हितों का पोषक होने का आरोप लगाया जाता

है। आपका क्या कहना है ?' चौधरी साहब ने उत्तर दिया—'ऐसा आरोप लगाने वाले बेईमान और जाहिल हैं।......ये ऐसे वामपन्थी हैं जो लन्दन और अमेरिका में इकानामिक्स रटते हैं, वही मार्क्स रटकर भारतीय सन्दर्भों की परवाह किये बिना, लन्दन अमेरिका से लौटकर, फतवा देने में यकीन रखते हैं।' (रविवार १२–१८ फरवरी ७८)

श्री चन्द्रजीत यादव कोई आर्थिक चिन्तक नहीं। कुछ घिसे पिटे फार्मूले वे ढो रहे हैं जिन्हें सही माने में रद्दी की टोकरी में होना चाहिए। वे देश की वास्तविक समस्याओं को कम जानते हैं। खेद है कि इसी कारण उनका निदान भी दोषपूर्ण है। साफ बात तो यह है कि भारत की समस्याओं का हल न तो पूँजीवादी व्यवस्था के पास है और न समाजवादी व्यवस्था के पास। दोनों की प्रकृति हमारे अनुकूल नहीं। सच पूछा जाय तो इन दोनों ही नीतियों का उचित समायोजन गान्धीवाद में हुआ है और गान्धीवाद ही इस देश की करोड़ों जनता को बेहतर जिन्दगी और देश की अर्थव्यवस्था को गतिमान बना सकता है।

गान्धीवाद पर आधारित जिस आर्थिक कार्यक्रम की रूपरेखा चौधरी चरण सिंह ने तैयार की है यह सम्भव है कि अधिक गहराई के साथ उस पर चर्चा हो और अनेक पहलुओं से नीति को ठोस और मजबूत बनाया जाय उसमें परिवर्द्धन और संशोधन किया जाय लेकिन यह तथ्य अपने स्थान पर है कि कल्याण का मार्ग यही है। इसके अलावा कोई अन्य मार्ग हो ही नहीं सकता।

इसे न दायें कहा जा सकता है न बायें बल्कि यह राष्ट्रीय और कल्याण का मार्ग है। इस विशाल देश में यदि औद्योगीकरण और भारी पूँजी वाली सोवियत या नेहरूवादी अर्थव्यवस्था चलती रहती है तो अमीर और अधिक अमीर और गरीब और अधिक गरीब होता चला जायगा जैसा कि गत तीस वर्षों में हम देखते चले आये हैं। इसमें शक नहीं समृद्धि के अनेक टापू देश के विभिन्न भागों में खड़े हो गये और

इनमें कुछ ऐसी चीजें तैयार होने लगीं जो पहले भारत में तैयार नहीं होती थीं। इनके कारण ही विश्व के अनेक समृद्ध देशों की तुलना में हमारा देश रक्खा जाने लगा था।

मगर क्या इससे बहुसंख्यक देशवासियों का जीवन स्तर बढ़ा? क्या उनकी कठिनाइयाँ दूर हुईं? क्या भारी विषमता या तनख्वाह के अनुपात में जो अन्तर है वह कुछ घटा? क्या गरीबी की जीवन रेखा के नीचे जीने वाली देश की चालीस प्रतिशत आबादी की जिन्दगी में सबेरा आ सका?

ऐसा नहीं हुआ। पूँजी प्रधान अर्थव्यवस्था जो साम्यवाद की देन है उससे आशा की भी नहीं जाती थी। मगर बड़ी गर्मजोशी के साथ इस घातक अर्थव्यवस्था की फर्जी उपलब्धियों की लगातार ढोल पीटी जाती रही है। चौधरी चरण सिंह ने अपनी पुस्तक में इन खौलते हुए तथ्यों को आंकड़ों के प्रकाश में प्रस्तुत कर देशवासियों की आंखों पर पड़े पर्दे को उठा दिया है और नग्न सत्य को उजागर किया है। बातों से सत्य को ढंका नहीं जा सकता और न प्रचारों से वास्तविकता को दफन किया जा सकता है।

एक सवाल श्री जगजीवन राम ने हाल में उठा दिया है (टाइम्स आफ इंडिया १९ मार्च ७८) कि ग्रामीण क्षेत्रों और कृषि पर किया जाने वाला भारी विनियोजन व्यर्थ ही चला जायगा। उनका यह कथन नीति की दृष्टि से कम व्यक्तिगत द्वेष से शायद अधिक प्रभावित है। हाँ उनके कथन में इतना सार अवश्य है कि ग्रामीण क्षेत्रों में जो विनियोजन किया जा रहा है ईमानदारी के साथ वह धन व्यय नहीं हो रहा है।

भारत में विकास कार्यों में लगा हुआ प्रशासनतंत्र सही माने में लचर और भ्रष्ट है और ऐसे प्रशासनतंत्र के हाथों ही अगर और अधिक पूंजी दे दी गई तो वह भी व्यर्थ ही चली जायेगी। योजनाओं के कार्या-न्वयन वाला दस्ता निहायत कमजोर और नौकरशाहीतंत्र का हिस्सा

है इस पर पूरा भरोसा नहीं किया जा सकता। मगर इसका यह अर्थ नहीं कि सोच में कहीं कोई खामी है।

लेकिन यह सही है कि यह वैकल्पिक अर्थनीति देश की करोड़ों जनता के लिए तभी तरक्की का रास्ता खोल सकेगी जब देश की श्रम शक्ति का भरपूर और जोरदार ढङ्ग से उपयोग हो, जब भारतीय अपनी किस्मत अपने हाथों ही बदलने के लिए उठ खड़ा हो और अपने बाहुबल से अपनी स्थिति बदलने के फ़ौलादी इरादे से काम करना शुरु करे। पूँजी प्रधान अर्थव्यवस्था के स्थान पर श्रम प्रधान अर्थव्यवस्था एकबारगी नहीं बदली जा सकती। न ऐसा हो सकता है। मगर अब वक्त आ गया है कि नये रास्ते पर सफर शुरु हो। यही कल्याण का रास्ता है। हमें न बायें जाना है न दायें शायद यही चौधरी चरण सिंह की मंशा भी है। ●

इण्डियाज इकॉनमिक पौलिसी : द गांधियन ब्लू प्रिंट। लेखक : चरण सिंह प्रकाशक : विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा० लि०। ५ अन्सारी रोड, नयी दिल्ली, मूल्य : ३० रुपया, प्रकाशन वर्ष १९७८।